ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 01 मार्च 2020

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 01 मार्च 2020 से 07 मार्च 2020

फाल्गुन शु. – 01 ● वि० सं०–2076 ● वर्ष 62, अंक 09, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 196 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,120 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. कॉलेज कोटखाई में ऋषि जन्मोत्सव पर हुए यज्ञ व भजन

डी.ए.वी. महाविद्यालय कोटखाई में महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में आर्य समाज कोटखाई व डी.ए.वी. शताब्दी महाविद्यालय कोटखाई के संयुक्त तत्त्वावधान में यज्ञ व भजन का आयोजन किया गया। इस अवसर पर यज्ञ के संचालन के लिए डॉ. प्रमोद योगार्थी, प्राचार्य, दयानन्द ब्रह्माण महाविद्यालय हिसार हरियाणा तथा उनके दो शिष्य प्रभात और राजेश पधारे। यज्ञ में इलाके के गणमान्य लोगों ने आहुतियाँ प्रदान कीं।

डॉ. प्रमोद योगार्थी ने अपने उद्बोधन में महर्षि के जीवन तथा दर्शन को उजागर किया। उन्होंने ऋषि के समय प्रचलित कन्या वध, बलि प्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए महर्षि दयानन्द के प्रयासों का उल्लेख किया।

इस अवसर पर कॉलेज की संगीत प्राध्यापिका डॉ. कमलेश वर्मा तथा छात्राओं ने मिल यज्ञ प्रार्थना, सुखी बसे संसार सब... भजन गाये एवं शान्ति पाठ किया। शिमला से आए श्री हरीश गुप्ता तथा मनोज ठाकुर ने भजन प्रस्तुत किए।

प्रधानाचार्य डॉ. राजकुमार जिस्टू ने धन्यवाद प्रस्ताव में डॉ. प्रमोद योगार्थी व उपस्थित जन–समूह का यज्ञ आयोजन को सफल बनाने के लिए धन्यवाद किया। उन्होंने अपने सम्बोधन में उल्लेख किया कि हम सौभाग्य–शाली हैं कि हम आर्यरतन डॉ. पूनम सूरी, पद्मश्री से अलकृंत, प्रधान, डी.ए.वी. प्रबन्धक समिति एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के मार्गदर्शन में कार्य कर रहे हैं।

प्रधानाचार्य ने जानकारी दी कि आने वाले समय में महाविद्यालय में मासिक यज्ञ किया जायेगा व डी.ए.वी. के प्रांगण में यज्ञशाला का निर्माण किया जाएगा। डॉ. जिस्टु ने रुसा से प्राप्त ग्रांट के विषय में लोगों को जानकारी दी। रुसा के तहत प्राप्त 4 करोड़ की राशि से डी.ए.वी. महाविद्यालय कोटखाई को मॉडल

महाविद्यालय बनाने हेतु छात्रावास, महाविद्यालय के भवन के नवीनीकरण व अन्य आवश्यक उपकरणों की खरीदारी की जाऐगी।

इस अवसर पर स्थानीय प्रतिष्ठित निवासी, कॉलेज के पूर्व विद्यार्थी, डी.ए.वी. स्कूल के अध्यापकगण, पर्यावरण समिति खनेटी, थिंक द बिग एन.जी.ओ. विद्यार्थियों के अभिभावकगण, महाविद्यालय के प्राध्यापकगण उपस्थित रहे।

डी.ए.वी. मलोट में परीक्षार्थियों के लिए काउंसलिंग सत्र

डी.ए.वी. एडवर्ड गंज सीनियर सेकेंडरी पब्लिक स्कूल मलोट द्वारा विद्यालय की आठवीं और दसवीं बोर्ड कक्षा के छात्रों के लिए काउंसलिंग सत्र लगाया गया। काउंसलिंग सत्र की रिसोर्स पर्सन विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती संध्या बटला थीं।

इस अवसर पर विशेष किया गया जिसमें ऋषि जन्मोत्सव को लेकर विशेष आहुतियाँ प्रदान की गईं। विद्यालय की प्राचार्या एवं काउंसलिंग सत्र की विशेषज्ञ प्राचार्या श्रीमती संध्या बठला ने विद्यार्थियों को बोर्ड परीक्षा में अच्छे अंक लाने के तरीके बताए। उन्होंने कहा कि बोर्ड परीक्षा के समय खान–पान का ध्यान रखना चाहिए। उत्तर पुस्तिका में रोल नंबर भरने के लिए 7 कॉलम है जबकि रोल नंबर 8 अंकों का होगा। 8 अंकों के रोल नंबर को 7 कॉलम में कैसे भरें इसके बारे में बच्चों को पीपीटी के माध्यम से विस्तार पूर्वक बताया। प्रत्येक विषय का ध्यान रखते हुए प्रत्येक विषय के लिए अलग–अलग टाइम टेबल निर्धारित करें। अच्छी नींद लें ताकि पढ़ाई करते समय दिमाग पर चिंता ना आए। यदि कोई परेशानी है तो अपने माता–पिता एवं अध्यापकों से उसके बारे में जरूर बातचीत करें जिससे उन परेशानियों को जल्दी से जल्दी सुलझाया जा सके। परीक्षा केंद्र में जाते समय किसी भी प्रकार का दबाव लें। परीक्षा केंद्र में समय पर पहुंचें जिससे पूरा ध्यान परीक्षा पर लगा सके। यदि प्रत्येक बच्चा परीक्षा के समय अपने आप को पूरी तरह से परीक्षा के लिए तैयार कर ले तो वह बहुत अच्छे नंबर ला सकता है।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ९

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 01 मार्च 2020 से 07 मार्च 2020

जंगम-स्थावर का राजा

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

इन्द्रो यातोऽवसितस्य राजा, शमस्य च शृङ्गिणो वज्रबाहुः।
सेदु राजा क्षयति चर्षणीनाम्, अरान्न नेमिः परि ता बभूव।।

ऋग् 1.32.15

ऋषिः **हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः।** देवता **इन्द्रः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**वज्रबाहु**) वज्रभुज (**इन्द्रः**) परमेश्वर (**यातः**) चलने–फिरने वाले का, (**अवसितस्य**) निश्चल का (**शमस्य**) शांत का, (**शृङ्गिण च**) और तीक्ष्ण वृत्ति वाले का (**राजा**) राजा [है]। (सः इत्) वही (**चर्षणीनां**) मनुष्यों का (**राजा**) राजा [होकर] (**क्षयति**) निवास कर रहा है। (**अरान्**) अरों को (**नेमिः न**) परधि के समान [वह] (**ता**) उन्हें (**परि बभूव**) चारों ओर से व्याप्त किये हुए है।

● मैं अपने इन्द्र प्रभु का क्या वर्णन करूँ, कैसे उसकी महिमा का गान करूँ? उसकी महिमा के गीत गाने को जो जी चाहता है, पर वाणी में शब्द नहीं मिलते। फिर भी टूटे–फूटे शब्दों में ही सही, कुछ तो गुनगुना लूँ, कुछ तो अपने मन की साध पूरी की लूँ। मेरा प्रभु चलने फिरनेवाले जंगम अर्थात् चेतन जगत् और निश्चल होकर बैठ स्थावर अर्थात् जड़–जगत् दोनों का राजा है, दोनों पर उसका अधिपत्य है। वह पशु, पक्षी,सरीसृप, मानव आकद तथा वन, पर्वत, नदी, सागर, सूर्य, चन्द्र आदि सबका अधिष्ठाता और व्यवस्थापक है। उसकी आज्ञा के बिना एक पत्ता तक नहीं हिल सकता। वह शान्त–जीवन व्यतीत करने वाले, तप–साधन में निरत रहने वाले शान्तवृत्ति ऋषि–मुनियों का भी राजा है और तीक्ष्णशृंग अर्थात् तीक्ष्ण साधनों का अवलम्बन करने वाले तीक्ष्णवृत्ति रजोगुणियों का भी राजा है, नियन्त्रणकर्ता है। वह वज्रबाहु है, भुजा में वज्र धारण किये है और उच्छृङ्खलों को उनके उच्छृङ्खल कर्मों के अनुसार यथायोग्य दण्ड दे रहा है। कोई उसकी दण्ड–व्यवस्था से कितना ही बचना चाहे, बच नही सकता। वही हम सब 'चर्षणियों' का कृषिकर्ता मानवों का भी राजा होकर निवास कर रहा है, चाहे हम अपनी मनोभूमि का कर्षण करके उसमें सद्गुणों का बीज वपन कर आन्तरिक सम्पदा को लहलहाते हों, चाहे हल चलाकर, उत्तम बीज बोकर भूमि को सस्यश्यामला बनाते हों।

जैसे रथ–चक्र की नेमि समस्त अरों को चारों ओर से व्याप्त किये होती है और अपने में थामे होती है, वैसे ही जगत् का राजा वह इन्द्रदेव जगत् की वस्तुओं के चारों और व्याप्त होकर उन्हें सहारा दिये हुए है, तभी संसार के सब पदार्थ पृथक्–पृथक् इकाई होते हुए भी परस्पर सामंजस्य रखे हुए हैं और विश्व के चक्र को चला रहे हैं। अन्यथा उनकी स्थिति वैसी ही हो जाए, जैसी नेमि के टूट जाने पर रथ–चक्र के घरों की होती है, तब विश्वचक्र –प्रवर्तन ही समाप्त हो जाए।

आओ, हम एक स्वर से अपने उस राजराजेश्वर इन्द्र प्रभू के चरण–चंचरीक बनकर उसकी महिमा का गुंजार करें।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु दर्शन

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में महात्मा आनन्द स्वामी ने बताया कि संकल्प की शक्ति महान है। यदि यह संकल्प दृढ़ हो तो वह शक्ति अजेय है। यदि संकल्प सत्य और शिव भी हो तो सफलता करबद्ध चरण चूमती है। संकल्प अर्थात् धारणा, विचार, भावना। जैसे आपके मन के विचार और भावनायें हैं, आपका वातावरण वैसा ही बनता चला जायेगा। छान्दोग्य–उपनिषद् में स्पष्ट कहा है कि दृढ़ संकल्प वाला व्यक्ति 116 वर्षों तक जीवित रह सकता है, इसका कोई गूढ़ रहस्य नहीं, साधारण ज्ञान है कि पुरुष अपने आपको यज्ञ–रुप बनाने का दृढ़ संकल्प करे।
–अब आगे...

मन का तन पर कितना प्रभाव होता है और किस तरह चिन्तित मन जीवन की समस्त शक्ति को हरकर नष्ट कर देता है, इसके सम्बन्ध से वही अमेरिकन लेखक लिखते हैं–

"चिन्ता से न केवल शरीर की शक्ति का ह्रास तथा मानव–शक्ति का नाश होता है, प्रत्युत इससे मनुष्य का किया हुआ कार्य भी निचले दर्जे का होने लगता है। यह मनुष्य की योग्यता को कम कर देती है। अपने काम को व्यक्ति सम्पूर्ण सुचारु रूप से नहीं कर पाता जब उसका मन क्षुब्ध तथा चिंतित हो। मन अपनी सम्पूर्ण शक्ति और योग्यता से काम करे, इसके लिए आवश्यक है कि वह दुःखों, चिन्ताओं, विकारों तथा क्षोभों से मुक्त हो। चिन्तित मस्तिष्क कभी ठीक तरह नहीं सोचता, शक्ति के साथ नहीं सोचता, न्याययुक्त नहीं सोच पाता। पाचनेन्द्रियों पर तो चिन्ता तथा क्षोभ का इतना प्रभाव पड़ता है कि देखकर आश्चर्य होता है। जब पाचनेन्द्रियों में गड़बड़ होती है, तब सारे शरीर का प्रबन्ध ही अस्त–व्यस्त होने लगता है। चिन्ता से न केवल स्त्रियाँ बूढ़ी–सी दिखाई देने लगती है, प्रत्युत सचमुच ही बूढ़ी हो जाती है।" ("Worry not only saps vitality and wastes energy, but it also seriously affects the quality of one's work. It cuts down ability of efficiency into his work when his mind is troubled. The mental faculties have must perfect freedom before they will give out their best. A troubled brain cannot think clearly, vigorously and logically. The digestive organs are extremely sensitive to worry and when the digestion is interfered with, the whole physical economy is thrown into disorder... worry not only makes a woman look older, but actually makes her older.")

इन तथ्यों से प्रेरित होकर डॉक्टर मार्डन ने यथार्थ लिखा है कि "यदि कोई आदमी संसार में चिन्ता को नष्ट करने का मार्ग ढूँढ़ ले, तो वह संसार का इतना कल्याण करेगा, जितना कि आज तक कोई भी अन्वेषक तथा आविष्कारक नहीं कर सका। मानव–मस्तिष्क उस सर्वनाश को मापने में असमर्थ है, जो संसार में चिन्ता के कारण प्रतिक्षण हो रहा है।" ("One who could rid the world of worry would render greater service to the race than all the inventors and discoverers that ever lived. No human intellect can estimate the unutterable havoc and ruin wrought by worry.")

डॉक्टर मार्डन का विचार मिथ्या नहीं है। सांसारिक लोगों का सबसे बड़ा कल्याण कारक, उपकारक वही है जो इन विपद्ग्रस्तों को चिन्ता के कीचड़ से निकालकर आशा आह्लाद से भी सुन्दर और सुरक्षित वाटिका में ला खड़ा करे। मानव अपनी हानि अपने ही हाथों करता है; स्वयं अपने पाँव पर कुल्हाड़ी चलाता है। पहले मन में चिन्ता को जन्म देता है, फिर स्वयं ही इस पिशाचिनी के चंगुल में फँसकर रोने लगता है। यदि वह अपने मन में बुरे संकल्प न करे, कुविचारों को पास न आने दे, तो इस चिन्ता–डाइन की क्या मजाल कि इधर झाँक भी जाय! तनिक इस अनुभूत नुस्खे का प्रयोग तो करके देखिये! फिर अनुभव कीजिये कि यह आपको कितनी ऊँचाइयों पर ले जाता है।

डॉक्टर मार्डन ने अपनी पुस्तक *'पीस, पॉवर एण्ड प्लैंटी'* (शान्ति, शक्ति और बाहुल्य) में एक घटना का उल्लेख किया है, जो कि इस सिद्धान्त का ज्वलन्त उदाहरण है। एक गाँव में एक बूढ़े पादरी रहते थे। उन्होंने अपने बत्तीस–के–बत्तीस दाँत निकलवाकर नकली दाँत लगवा रखे थे। रात को सोते समय वे दाँत उतारकर पलँग के पास तिपाई पर रख देते और प्रातः उठकर लगा लेते। यह उनका स्वभाव ही हो गया था। एक दिन प्रातःकाल उठे तो उन्हें अपने पेट में हल्की–हल्की पीड़ा का

शेष पृष्ठ 06 पर

वेद मार्ग ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग है

● डॉ. रवीन्द्र कुमार शास्त्री 'सोम'

स्वामी दयानन्द सरस्वती वेदों, व्याकरण एवं दर्शनों के अद्वितीय विद्वान् थे। स्वामी दयानन्द के बचपन का नाम मूलशंकर था। यही बालक बाद में स्वामी दयानन्द के नाम से सम्पूर्ण संसार में विख्यात हुए। स्वामी दयानन्द ने स्वामी बिरजानन्द के पास रहकर पूरी शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् वेदों की रक्षार्थ संसार के लोगों से कहा था कि वेदों की ओर लौटो और बताया कि वेद मार्ग एक ऐसा मार्ग है जिस पर चलने से मानव–जाति का कल्याण हो जाता है। सृष्टि के आदिकाल में परमात्मा ने चार ऋषियों के अन्तःकरण में चार वेदों का ज्ञान दिया। ऋग्वेद का ज्ञान अग्नि ऋषि, यजुर्वेद का ज्ञान वायु ऋषि, सामवेद का ज्ञान आदित्य ऋषि और अथर्ववेद का ज्ञान अङ्गिरा ऋषि को दिया। इन चार ऋषियों ने विश्व के समस्त मानव जाति को बताया कि वेदवाण ी परमात्मा की वाणी है। जो मनुष्य परमेश्वर की वाणी को अपने जीवन में उतारता है और तदनुकूल आचरण करता है उसका कल्याण हो जाता है। वेदों का कथन है कि जो मनुष्य जैसा कर्म करता है, परमात्मा उसे वैसा ही फल देता है। **अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं शुभाशुभम्।** अर्थात् शुभ और अशुभ कर्मों को अवश्य ही भोगना पड़ता है। इसलिए मनुष्य अपने जीवन में सदा शुभकर्म करें।

मनुष्य का जीवन अत्यन्त शुद्ध और पवित्र है। जो मनुष्य अपने जीवन को शुद्ध और पवित्र बनाना चाहता है, उसे वेदमार्ग का अनुसरण करना ही पड़ेगा। वेदों का मन्तव्य है कि **आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः** अर्थात् आचारहीन व्यक्तियों को वेद भी पवित्र नहीं करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि जीवन कर्म पर आधारित है। जो मानव वेदों के विरुद्ध आचरण करते हैं उनका जीवन पशुवत् हो जाता है। वह समाज के नजरों में पतित हो जाता है। समाज का निर्माण–चरित्रवान व्यक्तियों पर ही निर्भर करता है। एक चरित्रवान व्यक्ति के द्वारा ही समाज, राष्ट्र एवं विश्व का कल्याण हो सकता है। मानव–जीवन सबसे अमूल पदार्थ है। चरित्र का पतन होने से मनुष्य समाज के बीच अपना मुँह दिखाने लायक नहीं रहता है। वह समाज के दृष्टि में गिर जाता है और समाज के लोग उसे उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। जो व्यक्ति समाज, राष्ट्र एवं विश्व का कल्याण चाहता है, अपना कल्याण चाहता है एवं अपना सुधार चाहता है उसे पहले स्वयं सुधरना पड़ेगा। उसे चरित्रवान बनना पड़ेगा तभी वह समाज का निर्माण कर सकता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती चरित्र के धनी व्यक्ति थे। उन्होंने अपने उज्ज्वल चरित्र के द्वारा समाज को भी उज्ज्वल बनाने का प्रयास किया। स्वामी दयानन्द ने बताया कि **न तस्य प्रतिमां अस्ति।** अर्थात् वेदों के अनुसार ईश्वर की कोई प्रतिमा नहीं होती है। यह यथार्थ है। परमात्मा का स्वरूप साकार नहीं निराकार है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के द्वितीय नियम में लिखा है– ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता हैं। उसी की उपासना करनी योग्य है।

परमात्मा सत् चित और आनन्द है। प्रकृति सत् है। जीवात्मा सत् और चित है। प्रकृति और जीवात्मा के पास आनन्द नहीं है। आनन्द तो केवल परमेश्वर के पास ही है। इसलिए हमारे देश के ऋषि–मुनि जंगलों में बैठकर प्रभु का ध्यान लगाते थे और परमात्मा पाकर मोक्ष प्राप्त करते थे। प्रभु का कोई आकार नहीं है। वह निराकार है। सर्वत्र व्यापक है, न्यायकारी और दयालु है। अतः हमें ऐसे परोपकारी ईश्वर की ही उपासना करनी चाहिए। अन्य की नहीं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना करके संसार के लोगों का बड़ा उपकार किया है। ऐसे परोपकारी महर्षि दयानन्द को मेरा शत् शत् नमन है। स्वामी दयानन्द ने संसार के लोगों को वेदों के मार्गों पर लाने का अथक प्रयास किया और कहा वेद परमात्मा का एक संविधान है, जिसके नियमों के पालन करने से विश्व के सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण संभव है। **वेदोऽखिलो धर्ममूलम्** अर्थात् वेद ही सम्पूर्ण विश्व के धर्म का मूल है। वेद अमृतवाणी है। जो मनुष्य वेदरूपी अमृतवाणी का रसपान करता है। उसका जीवन पुनीत हो जाता है। जो मनुष्य वेदरूपी अमृतवाणी का रसास्वादन नहीं करता है उसका जीवन नरकवत् हो जाता है। स्वामी दयानन्द का प्रिय मंत्र था।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद भद्रं तन्न आसुव।

हे प्रकाशस्वरूप परमेश्वर! आप सम्पूर्ण संसार के उत्पत्तिकर्त्ता है। प्रत्येक प्राणी आप से ही प्रेरणा प्राप्त करता है। हम आपसे विनती करते है कि हे प्रभु। आप हमारे अन्तःकरण के समस्त दुर्गुणों एवं दुर्व्यसनों को दूर कर दीजिए। आपकी कृपा एवं आशीर्वाद से हम सम्पूर्ण सद्‌गुणों को धारण कर अपने जीवन को महान् बनायें।

Aum, o God Almighty, The creator of the universe and Dispenser of all happiness! We pray Thee to dispal all our bad habits. bad deeds and calamities and bestow upon us what is blessed, good us picious and beneficial.

यह मंत्र स्पष्ट करता है कि मनुष्य का अन्तःकरण शुद्ध और पवित्र होना चाहिए। एक प्रभु का भक्त इससे प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर! आप हमारे अन्तःकरण की सारी बुराइयों एवं दुर्व्यसनों को दूरकर दीजिए और जो कल्याणकारी बातें है उन्हें प्राप्त कराइये।

मानव का जीवन शुद्ध और पवित्र है। लेकिन कुछ मनुष्य अपनी बुरी आदतों से मजबूर हैं। वे स्वयं अपनी बुरी आदतों से अपने जीवन को बर्बाद कर डालते हैं और अपने को नरकरूपी गर्त में ढकेल देते हैं। यदि मनुष्य चाह ले तो आसमान को छू सकते हैं, हिमालय की चोटियों पर चढ़ सकते हैं, कठिन से कठिन कार्यों को सरलता से पूर्ण कर सकते हैं। परन्तु आज के मनुष्य बहुत आलसी हो गये हैं। ये काम करना नहीं चाहते हैं। आज के मनुष्य यही सोचते हैं कि बिना मेहनत के हमें रोटी मिल जाये तो यह संभव नहीं है। परमात्मा ने मनुष्य का जीवन शुभकर्मों एवं मोक्ष प्राप्त करने के लिए दिया है। महाकवि तुलसीदास ने बड़ा सुन्दर लिखा है –

बड़े भाग मानुष तन पावा।
सुर दुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा।
साधन धाम मोक्ष कर द्वारा।
पाइ न जोहिं परलोक संभारा।।

मनुष्य का जीवन अनेक जन्म जन्मान्तरों के शुभ संस्कारों के पश्चात् मिलता है। जो समझदार व्यक्ति होता है वह अपने जीवन को शुभ कार्यों में लगाता है और जो समझदार नहीं होता है वह मनुष्य दारू, शराब, ताड़ी एवं बीयर पीता है, सिगरेट और बीड़ी पीता है, हुक्का पीता है, मांस खाता है, मछली खाता है। जबकि शास्त्रों का कथन है कि मांस मनुष्य का भोजन नहीं है।

शास्त्रों का कथन है कि मनुर्भव अर्थात् मनुष्य बनो। परन्तु वर्तमान समय में कुछ मनुष्य रूप में राक्षस दीखते हैं। परमेश्वर ने हमें मनुष्य का जीवन क्यों दिया है? परमात्मा ने हमें मानव का जीवन मोक्ष प्राप्ति के लिए दिया है। परन्तु आज के मानव खाने–पीने सोने और मौज उड़ाने में मस्त हैं। ऐसे लोग अपने जीवन को बर्बाद करते हैं। मैं मानता हूँ कि खाना–पीना और सोना मनुष्य के लिए जरूरी है। इतने काम तो पशु भी करते है। तो मनुष्य और पशु में अंतर क्या है? मनुष्य एक विवेकशील प्राणी है। ये अच्छाई क्या है और बुराई क्या है दोनों को अच्छी प्रकार जानते हैं। लेकिन यह ज्ञान पशु को नहीं है। मनुष्य अपने शुभकर्मों एवं प्रभु की भक्ति से मोक्षरूपी नभ को छू सकते हैं। जो मनुष्य खाना–पीना सोना और भोग विलास को ही अपने जीवन का वास्तविक लक्ष्य समझते हैं तो समझो ये अपने जीवन के साथ धोखा कर रहे हैं और ऐसे मनुष्य इन्हीं उलझनों में फँसकर अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य को भूल जाते हैं और परजन्म की तैयारी कुछ नहीं कर पाते हैं।

मनुष्य के जीवन को चार भागों में बाँटा गया है–(1) ब्रह्मचर्याश्रम (2) गृहस्थाश्रम (3) वानप्रस्थाश्रम (4) संन्यासाश्रम।

पहला आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम है। इसमें ब्रह्मचारी या विद्यार्थी अपने ब्रह्मचर्य की रक्षा करते हुए गुरुकुलों में विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में अध्ययन करते हैं और जब सम्पूर्ण शास्त्रों में पारंगत हो जाते हैं तब ब्रह्मचारी या विद्यार्थी गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट होते हैं।

दूसरा आश्रम है गृहस्थ आश्रम। इसमें गृहस्थी लोग पचास वर्षों तक गृहस्थाश्रम की पूर्ण जिम्मेवारी को निभाकर पचास वर्ष के बाद घर की पूरी जिम्मेवारी निभाते हैं।

तीसरा आश्रम है वानप्रस्थ आश्रम। पचास से पचहत्तर वर्ष तक वानप्रस्थी वन में रहकर प्रभु का ध्यान करते थे उसका ही भजन करते थे और मोक्ष की प्राप्ति में लग जाते थे।

चौथा आश्रम है संन्यास आश्रम। इस आश्रम में संन्यासी लोग पचहत्तर वर्ष से लेकर सौ वर्ष तक वेदों का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना ऐसा पुनीत कार्य करते थे। गाँव–गाँव में जाकर धर्मोपदेश करते थे और ज्ञान की बातें बताते थे जिससे मानव जाति का कल्याण हो। वेदों का कथन है कि मनुष्य शरीर मिलने का मतलब है कि मोक्ष प्राप्त करना। जो मनुष्य मोक्ष प्राप्त नहीं करता है संसार में उसका आना व्यर्थ हो जाता है। वह अनेक जन्मों तक भटकता है और फिर शुभकर्मों के आधार पर उसे मानव का शरीर मिलता है। मनुष्य मोक्ष प्राप्त इसलिए करना चाहता है कि जिससे वह बार–बार आवागमन के बंधनों से मुक्त हो जाए। जब मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है तब वह खरबों नीलों वर्षों तक आवागमन के बंधनों से मुक्त हो जाता है और विशेष परिस्थितियों में मानव–जाति के लिए कल्याणार्थ यह मुक्तात्मा पुनः भूलोक पर जन्म लेकर मानव–जाति का उद्धार करता है।

वेदों एवं दर्शनों का भी कथन है कि मनुष्य का अंतिम लक्ष्य मोक्ष है। जो मनुष्य मोक्षपद से वंचित रह जाता है। वह बाद में पछताता है। योग दर्शन के अनुसार हमें अपने जीवन को पवित्र बनाना चाहिए।

योग के आठ अंग होते हैं–

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा व समाधि। जो मनुष्य परमेश्वर की उपासना करके अज्ञानता, अविद्या और दुःखों से छूटकर सत्य और धर्म का पालन करता है। वह आत्मिक उन्नति करके मुक्ति को प्राप्त करता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज के छठवें नियम में लिखा है।

संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। स्वामी दयानन्द का मन्तव्य है कि जो व्यक्ति समाज, राष्ट्र एवं विश्व का कल्याण करना चाहता है तो उस व्यक्ति के लिए शारीरिक एवं आत्मिक उन्नति अत्यावश्यक है। तभी वह समाज को आगे बढ़ाने में सक्षम हो सकता है। आत्मिक उन्नति के द्वारा ही मनुष्य मोक्षपद पाने की कल्पना कर सकता है।

वेद का मंत्र है –

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

हे दयालु परमेश्वर! आप हमें सत्य विद्या प्रदान करके हम पर उपकार करें। क्योंकि आप हमारे शारीरिक एवं आत्मिक बल के स्रोत हैं। आप हमारे एकमात्र उपास्य देव हैं। हम निष्ठापूर्वक आपके आदेशों का पालन करते हैं।

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

महर्षि स्वामी दयानन्द के विचार

● भद्रसेन

महर्षि स्वामी दयानन्द के विचारों की सुसंगति को पहचानने का दूसरा उदाहरण–पारस्परिक अभिवादन का लिया जा सकता है। जब तक व्यक्ति दूसरे से मिलता है, तो आपस में मिलने पर स्वाभाविक रूप से आदर की भावना उभरती है। जिस से परस्पर प्रसन्नता, सम्मान और अपनापन आता है। अतएव सभी देशों, वर्गों, धर्मों में आपस के अभिवादन के लिए कोई न कोई शब्द और शारीरिक चेष्टा आदि के अनेक रूप प्रचलित हैं। एतदर्थ महर्षि दयानन्द का विचार है –''बड़ों को मान्य दें, उनके सामने उठकर उन्हें उच्चासन पर बैठाएँ, प्रथम नमस्ते कहें।'' सत्यार्थ. 2, 36

"दिन रात में जब जब प्रथम मिलें वा पृथक् हों तब–तब प्रीतिपूर्वक 'नमस्ते' एक दूसरे से करें।" 4, 89

अभिवादन के लिए 'नमस्ते' शब्द का प्रयोग अवसर के अनुरूप, तर्कसंगत, शास्त्र सम्मत और आधार भूत मूल भावना से हर तरह से मेल खाता है।

ऋषिबोध के सुसंगतपन की तीसरी कसौटी है–'सामूहिक नाम आर्य'। व्यवहार में सुविधा की दृष्टि से प्रत्येक का अपना–अपना नाम होता है। प्रत्येक का जहाँ अपना–अपना वैयक्तिक नाम होता है, वहाँ सामूहिक दृष्टि से भी प्रत्येक समूह का एक नाम होता है। जिस–जिस दृष्टि से एक सामूहिक संगठन होता है, उसी–उसी दृष्टि से सामूहिक नाम प्राप्त होता है, जैसे कि धर्म, देश, राजनीति, कारोबार यूनियन के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, फौजी, दुकानदार आदि की दृष्टि से नाम प्रचलित हैं। इन सीमित समूहों की तरह इन सभी समूहों का एक साझा सामूहिक नाम होना चाहिए। अतः महर्षि दयानन्द का सिद्धान्त है, कि हमारा ऐसा सामूहिक नाम आर्य है, क्योंकि हमारा जितना भी मान्य साहित्य है उसमें सर्वत्र इस दृष्टि से आर्य शब्द का प्रयोग किया गया है। यह प्रयोग इतना अधिक प्रभावपूर्ण, सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा सार्वजनिक है कि किसी भी देश का नागरिक जहाँ–कहीं, जब–कभी इसका प्रयोग करना चाहे वह कर सकता है। प्रयोग करने वाले के जीवन की प्रत्येक प्रगति, आकांक्षा और भावना को आर्य शब्द पूरी तरह से अभिव्यक्त करता है, क्योंकि आर्य शब्द का सीधा सा अर्थ है–अच्छा, श्रेष्ठ, भला। अतः नमस्ते की तरह आर्य शब्द से भी स्पष्ट होता है कि महर्षि के मन्तव्य–शास्त्रसम्मत तथा तर्कसंगत हैं।

इन सामान्य बातों की तरह जब हम जीवन के मूलभूत तत्त्वबोध के सम्बन्ध में विचार करते हैं, तो पता चलता है, कि महर्षि दयानन्द ने जीवन के सर्वांगीण विकास और निखार के लिए भी एक सुसंगत तत्त्वबोध दिया है। जो 'एकेश्वरवाद, मनुष्य जाति की एकता, धर्म=अच्छे आचरण का नाम है और सभी महापुरुषों का सम्मान' के रूप में है। आईए! इन पर भी कुछ संक्षिप्त विचार करें।

1. एकेश्वरवाद

एकेश्वरवाद का अर्थ है, एक ईश्वर की मान्यता हमारे चारों ओर पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, सूर्य आदि अनेक प्राकृतिक पदार्थ हैं। जो हम जैसे किसी मनुष्य ने नहीं बनाये। इन प्राकृतिक पदार्थों की रचना, व्यवस्था किसी के करने से ही होती है। इनकी व्यवस्था बताती है, कि इसका कोई न कोई कर्ता–धर्ता और नियामक अवश्य है और वही ईश्वर है। ईश्वर के द्वारा होने वाले प्राकृतिक कार्य सभी स्थानों पर एकरूप में ही अपना–अपना कार्य कर रहे हैं। तभी तो सभी स्थानों पर अन्न, फूल, फल, खनिज, धातुएँ एक रूप में ही मिलती हैं। यह एकरूपता एवं समान व्यवस्था अपने उत्पादक, व्यवस्थापक की एकता को ही सिद्ध करती है।

इसी प्रकार सभी प्राणियों की अपनी–अपनी शरीर रचना, अंग–संस्थान और उनका कार्य एक सा ही है। प्रदेश का सामान्य सा ही भेद तथा प्रभाव होता है। यह एकरूपता, समानता भी अपने कर्त्ता की एकता को ही सिद्ध करती है। शास्त्रों में जगत के कर्ता–धर्ता–संहर्ता का एक रूप में ही विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। हाँ, वहाँ प्रकरण के अनुरूप उसके गुण, कर्म, स्वभाव को बताने के लिए भिन्न–भिन्न नामों का संकेत प्राप्त होता है, पर उन नामों का नामी एक ही है। इसके विशेष विवेचनार्थ–'वेद की कुंजी–प्रथम समुल्लास' पढ़िये।

ईश्वर के एक होने से ही उसके सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वेश्वर, सर्वशक्तिमान आदि गुण चरितार्थ होते हैं। एक से अधिक होने पर वह सर्वव्यापक आदि गुण वाला कैसे हो सकता है। ऐसे गुणयुक्त ईश्वर को मानने से ही उसकी 'कर्मफल व्यवस्था' पर पूर्णतः विश्वास जमता है। इसी विश्वास पर ही कोई सर्वथा पवित्र रहता है तथा सदा शुभकर्मों में जुटा रहता है।

एकेश्वरवाद की मान्यता के अनुसार महर्षि का यह दृढ़ विश्वास है, कि ईश्वर के कार्य जब अन्य कोई नहीं कर सकता है, तो ईश्वर की इस दया को ध्यान में रखते हुए हमें कृतज्ञता के रूप में ईश्वर की ही पूजा, भक्ति, उपासना करनी चाहिए। भक्ति द्वारा ईश्वर से अपना–अपना निकट सम्बन्ध अनुभव करने से आत्मिक शक्ति, शान्ति मिलती है। ईश्वर के स्थान पर अन्य देवी–देवताओं, अवतारों, पैगम्बरों, गुरुओं, माताओं, बाबाओं की उपासना नहीं करनी चाहिए। अर्थात् हमारी उपासना और प्रार्थना का एक मात्र आधार, हमारा इष्ट देव ईश्वर ही है।

मानव जाति की एकता–सभी मनुष्यों के शरीर, अंग संस्थान एवं उन–उन का कार्य एक ढंग का ही है। भौगोलिक दृष्टि से रूप, रंग का बहुत कम ही अन्तर होता है। सभी के हृदयों में सुख–शान्ति, स्नेह की एक–सी ही भावना होती है। सभी के खून का रंग लाल और सब की आत्मा अजर–अमर ही है। अतः प्रदेश, धर्म, भाषा, रंग, वर्ग के भेद के आधार पर परस्पर भेद–भाव नहीं करना चाहिए।

मानव समाज के स्त्री–पुरुष में भी सामान्य सा ही भेद होता है। इतने भेद से कोई ऊँचा–निम्न नहीं हो जाता। वस्तुतः ये दोनों मानव समाज के महत्त्वपूर्ण अंग हैं और दोनों का अपना–अपना महत्त्व है। दोनों को समानरूप से एक दूसरे के सहयोग, सद्भाव की आवश्यकता होती है। एक के बिना दूसरा अधूरा है। अतः इस समानता और पूरकता के आधार पर यह सरलता से कहा जा सकता है, कि एक मानव से दूसरे मानव और स्त्री–पुरुष में शिक्षा, योग्यता, सदाचार आदि के कारण ही छोटे–बड़े या अच्छे–बुरे अर्थात् असमानता या हल्के होने का अन्तर होता है।

अतः मानव जाति की एकता, समानता के कारण सबको समान रूप से प्रगति एवं प्रगतिदायक शिक्षा, धर्म आदि का समान अवसर और अधिकार प्राप्त होना चाहिए। ऐसा वहीं हो सकता है, जहाँ सब में समानता की भावना होती है। ऐसा व्यक्ति फिर किसी से सामाजिक उच्चता–निम्नता और जन्मना स्पृश्यता–अस्पृश्यता का भेदभाव नहीं करता। जब किसी व्यक्ति में यह विश्वास पूर्ण रूपेण होता है, कि सारी मानव जाति एक जैसी ही है। तब वह किसी को केवल किसी विशेष परिवार, वर्ग में जन्म लेने के कारण या स्त्री होने से या किसी विशेष प्रदेश, भाषा, धर्म से सम्बन्ध रखने के कारण किसी को अछूत या हल्का नहीं मानता और न ही इस आधार पर किसी से ईर्ष्या, द्वेष, घृणा करता है। ऐसा करने से परस्पर दूरी बढ़ती है और तब सामाजिक कार्यों में स्नेह, सद्भाव, सहयोग प्राप्त होना कठिन हो जाता है। इससे परस्पर एकता, संगठन भी नहीं पनपता है।

दूसरी ओर जब कोई किसी को केवल विशेष परिवार, वर्ग में जन्म लेने के कारण या पुरुष होने से या विशेष धर्म, भाषा, प्रदेश से जुड़ा होने के कारण अधिक अच्छा मानता है तो ऐसे विशेष अपने आपको दूसरों से अलग रखने लगते हैं। इससे आपस की एकता को ठेस लगती है अर्थात् सुदृढ़ता में अड़चन आती है। मानव समाज की स्थिति सामाजिक दृष्टि से हाथ की अंगुलियों की तरह है, जो आपस में काफी भिन्नता रखती है, उनमें से कोई लम्बी है, तो कोई छोटी, एक मोटी है, तो दूसरी पतली, पर वे जब जो भी कार्य करने लगती हैं, तो उस समय एक रूप में आ जाती हैं। जैसे कि लिखने, खाने, पकड़ने का कार्य करते समय भिन्न–भिन्न आकार–प्रकार, शक्ति रखती हुई भी ये अँगुलियाँ उस–उस कार्य के अनुरूप एक स्थिति में आ जाती है। वैसे ही सामाजिक कार्यों एवं एकता का व्यवहार हम सबको करना चाहिए।

धर्म–अच्छे आचरण का नाम है–ऋषि दयानन्द के तत्त्वबोध का तीसरा मूलमन्तव्य है–धर्म=सदाचार। धर्म शब्द वस्तुतः अच्छे आचरण का ही नाम है और आचरण को अच्छा बनाने के लिए ही धर्म की अपेक्षा होती है। निःसन्देह शास्त्रों में धर्म शब्द अनेक अर्थों में आता है, पर धर्म का मुख्य अर्थ है–सत्य, ईमानदारी, स्नेह, सहयोग आदि। ये वे गुण हैं जिनको अपने स्वभाव का अंग बनाने से व्यक्ति, परिवार, समाज–सुखी, व्यवस्थित होते हैं। धर्म प्रेरणा द्वारा व्यक्ति के स्वभाव को सुन्दर बनाता है। वह व्यक्ति पर कुछ थोपता नहीं, अपितु स्वभाव का अंग बनाता है, जिससे व्यक्ति स्वयं ही मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम की तरह अच्छाई की राह पर चले।

जैसे कि सामाजिकता के कारण हमारे आपस में माता, पिता, पुत्र, भाई, बहन, मित्र आदि के रूप में सम्बन्ध हैं। आपस के सम्बन्ध के अनुरूप उस–उस सम्बन्ध को निभाने से ही आपस के सामाजिक सम्बन्ध सुन्दर बनते हैं, वहाँ परस्पर स्नेह, सहयोग भी मिलता है। अतएव मनुस्मृति 2, 227 से 237 तक इस प्रकार के व्यवहार तथा सम्बन्ध के पालन को भी धर्म कहा है। इसी प्रकार आपस में एक–दूसरे के साथ सत्य और प्रिय बोलने को मनुस्मृति 4, 138 में सबसे पुराना, परखा हुआ धर्म कहा है। क्योंकि आपस में ठीक बोलने से सामाजिक व्यवहार तथा समाज सुखी और टिका रहता है।

शास्त्रों में धर्म शब्द–कर्मकाण्ड (=पूजा–पाठ, जप–तप, स्मरण–ध्यान, तीर्थ=व्रत, धार्मिक निशानियाँ), विश्वास, सिद्धान्त, स्वभाव, ढंग और आचार आदि अनेक अर्थों में आता है। पर इन अर्थों में से **'आचार परमो धर्मः'** मनु. 1,108 के अनुसार आचरण ही मुख्य है। तभी तो मनु. 6, 92 में घृति, क्षमा, संयम, सत्य आदि आचरण की बातों को धर्म की पहचान बताया गया है। धर्म की ये बातें आचरण में आने पर ही चरितार्थ होती हैं। धर्म का यह आचरण पक्ष ही ऐसा है, जिसके सम्बन्ध में सभी धर्म एकमत हैं तथा सभी धर्म इनको स्वीकार करते हैं। हाँ, धर्म नदी के पुल, नौका की तरह जीवन यात्रा को सरल बनाता है। विशेष जानकारी के लिए 'सरल–सुखी जीवन' देखिए।

सभी महापुरुषों का सम्मान–संसार में समय–समय पर अनेक विशेष व्यक्ति

शेष पृष्ठ 07 पर

गतांक से आगे ...

पर्यावरण की समस्या तथा इसका वेदोक्त समाधान

● वेदाचार्य डॉ. रघुवीर वेदालंकार

यज्ञ के लिए गोघृत ही सर्वोत्तम है। गोघृत में ही यह शक्ति है कि वह जल–वायु में मिले विष को तत्काल फाड़ देता है। गोघृत तथा गो दुग्ध में सौ ऊर्जा छिपी रहती है। गाय सूर्य से ऊर्जा लेकर इसे अपने दूध में घोल देती है। जब गोघृत को चावलों के साथ मिश्रित करके होम किया जाता है, तो इससे एसिटिलीन नामक तत्त्व उत्पन्न होता है जो कि प्रदूषित वायु को अपनी ओर खींचकर शुद्ध कर देता है। यज्ञाग्नि में आहुति डालने से वायुमण्डल में मार्जन, शोधन, भेदन क्रिया उत्पन्न हो जाती हैं। यज्ञाग्नि में प्रयुक्त द्रव्य सूक्ष्माति सूक्ष्म होकर उत्तरोत्तर ऊपर की ओर गति करता है तथा यज्ञ समाप्ति पर तापमान की न्यूनता के कारण नीचे की ओर भी गति करता है। इस प्रकार घर्षण क्रिया होकर वायु प्रदूषण तत्त्वों का विनाश होने लगता है। इसी के लिए वेद **'शन्नःवातः पवताम्'** (यजु. 36.10) कहता है तथा इस वायुमण्डल की पवित्रता के लिए **'शमु सन्तु यज्ञाः'** कहता है। यज्ञ के द्वारा पर्यावरण की शुद्धि के विषय में महर्षि दयानन्द लिखते हैं–

'जो केशर, कस्तूरी आदि सुगन्धित घृत, दुग्ध आदि पुष्ट, गुड़, शर्करा आदि मिष्ट, वृद्धि, बल तथा धैर्य वर्धक और रोगनाशक पदार्थ हैं, उनका होम करने से पवन और वर्षा जल की शुद्धि के पृथिवी के सब पदार्थों की जो अत्यन्त उत्तमता होती है, उसी से सब जीवों को परम सुख होता है' (ऋ.भा. भूमिका) केवल यज्ञ कुण्ड में घृत सामग्री डालने का नाम ही यज्ञ नहीं है, अपितु यज्ञ तो एक जीवन शैली है। उपभोक्ता से उत्पन्न पर्यावरण प्रदूषण का सशक्त उपाय यज्ञ ही है। न केवल बाह्य एवं आन्तरिक दोनों ही प्रकार के पर्यावरण का शोधन यज्ञ से होता है, अपितु यज्ञ से नाना रोगों के मुक्ति भी मिलती है, ऐसा अनेक परीक्षणों से सिद्ध किया जा चुका है। वेद में इसी आशय से **'अयक्ष्यं च मे अनामयश्च मे यज्ञेन कल्पताम्'** (यजु. 18.6) कहा गया है। अथर्ववेद में कहा गया है कि यज्ञ की हवि रोग की कीटाणुओं को उसी प्रकार बहा ले जाती है जैसे कि नदी भागों को बहा देती है। (**इदं हविर्यातुधानान् नदी फेनमिवा वहत्** (अथर्व. 1.8.1) इस विषय में पं. वीरसेन जी वेदश्रमी वेदविज्ञानाचार्य ने अपने निबन्ध 'विश्व स्वास्थ्य के लिए यज्ञ की उपयोगिता' में लिखा है 'यज्ञ के इस अद्भुत प्रभाव से हमने हृदय, वात, श्वास, उन्माद, लकवा, वाक्सामर्थ्यहीनता, रक्तचाप के रोगी, शारीरिक पीड़ा, गलित कुष्ठ, कम्पवात, कैंसर, क्षय, सन्तानहीनता, अशक्ति अनेक रोगों का दूर होना अनुभव किया है। फ्रांस के विज्ञान के प्रो. हिल्बर्ट के अनुसार जलती हुई शक्कर के धुएँ में वायुशोधन की विलक्षण क्षमता है। उन्होंने अपने प्रयोगों में यज्ञ से क्षय आदि अनेक रोगों के कीटाणुओं को नष्ट होते पाया।

रोगों की उत्पत्ति का मुख्य कारक वायुप्रदूषण ही है। इस विषय में महर्षि दयानन्द अपने पूना प्रवचन में 'यज्ञ और संस्कार' नियम पर बोलते हुए कहते हैं–

'इन दिनों होम के न्यून होने से बारम्बार वायु बिगड़ रही है, सदा विलक्षण रोग उत्पन्न हो जाते हैं। यज्ञ का लाभ बतलाते हुए महर्षि लिखते हैं– 'होम हवन से वायु शुद्ध होकर सुवृष्टि होती है– 'उससे शरीर नीरोग और बुद्धि विशद होती है, विद्या प्राप्ति होती है।' इसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास में स्वामी जी लिखते हैं 'अग्निहोत्र से वायु–वृष्टि, जल की शुद्धि होकर वृष्टि द्वारा संसार को सुख प्राप्त होना, अर्थात् शुद्ध वायु का श्वास, स्पर्श, खान–पान से आरोग्य वृद्धि, बल, पराक्रम बढ़ के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अनुष्ठान पूरा होना।'

वेदों में पर्यावरण के घटक तत्त्वों– पृथिवी, जल तथा वायु की शुद्धि पर पर्याप्त बल दिया गया है। समस्त प्राणी वायुमण्डल से प्राणवायु, पृथिवीमण्डल से भोजन तथा जलमण्डल से जल को ग्रहण करते हैं। इन्हीं के ऊपर हमारा जीवन निर्भर है। आज ये तीनों ही मण्डल दूषित हो गये हैं। परिणाम स्वरूप पर्यावरण समस्या उत्पन्न होने से जीवन दूभर होता जा रहा है।

वेदों में इन तीनों ही मण्डलों की सुरक्षा पर पर्याप्त बल दिया गया है। वेद का ऋषि भूमि को माता मानकर चलता है, (**माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः** (अथर्व. 12.1.12) तथा इसे स्योना=सुखकर बनाने की कामना करता है। जड़ होने पर भी पृथिवी ऐसा पदार्थ नहीं है जिसका कि हम दोहन मात्र करते जाएँ तथा बदले में इसकी सुरक्षा का प्रयत्न न करें। यदि हमें पृथिवी नामक महाभूत को दोषमुक्त रखना है तो माता के समान इसकी रक्षा करनी होगी। ऋषि भूमि से प्रार्थना करते हुए कहता है कि हे भूमि माता! मैं तुझे जिस रूप में क्षति पहुँचाऊँ; वह क्षति शीघ्र ही पूर्ण हो। यदि पुराने वृक्षों को काटा जाए तो उनके स्थान पर नए वृक्ष अवश्य लगा दिए जाएँ। (**यत्ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु** (अथर्व. 12.1.35) इससे पर्यावरण–समस्या उत्पन्न नहीं होगी। प्रकृति ने वन तथा वृक्ष पर्यावरण की शुद्धि के लिए ही बनाए थे। आज जन मानव स्थानाभाव के कारण तथा लकड़ी के लोभ के कारण वृक्षों एवं वनों को निर्दयता के साथ काट रहा है तो इससे पर्यावरण प्रदूषण समस्या उत्पन्न होगी ही। ऋग्वेद में वृक्ष को न उखाड़ने का स्पष्ट रूप में उल्लेख किया गया है।

पृथिवी में अपनी एक स्वाभाविक गन्ध होती है। (**यस्ते गन्ध पृथिवी संबभूव.** (अथर्व. 12.1.23) किन्तु आज कारखानों से निकलने वाले रसायन युक्त गन्दे पानी तथा पृथिवी के ऊपर फेंकी गयी गन्दगी ने उस गन्ध को समाप्त कर दिया। खेती में डाले गए रासायनिक खादों में भी पृथिवी के स्वरूप को बदल दिया है। यही हाल जल का है। नदियों में फेंके गये शवों, कूड़े तथा दूषित जल के मिश्रण से नदियों का वह स्वरूप नहीं रह गया जिसके लिए वेद में **'मधु क्षरन्ति सिन्धवः'** कहा था। अथर्ववेद में स्पष्ट रूप में कहा गया कि शुद्ध जल ही हमारे शरीर के लिए बहे, अशुद्ध नहीं। (**शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु** (अ. 12.1.30) यदि हम नदियों के शुद्ध, पवित्र जल में नाना प्रकार की अशुद्धियाँ डाल रहे हैं तो यह एक प्रकार से जलों की हत्या ही है। यजुर्वेद में स्पष्ट रूप में इसका निषेध किया गया है। (**मा अपो हिंसीः। यजु. 6.22**) ऋग्वेद में तो जलों के किनारे पर खड़े वृक्षों को काटने का भी निषेध किया गया है। (**यदर्णसं मोषथा वृक्षं कपनेव वेधसः।** (ऋ. 5.54.6) पृथिवी तथा जल तत्त्व की भाँति आज अन्तरिक्ष भी पूर्णतः दूषित है। परमाणु शस्त्रों के परीक्षण धर्मी तथा तेजाबी पदार्थ हवा में जमा होते जा रहे हैं। परिणामस्वरूप वायुमण्डल दूषित हो रहा है। यह अन्तरिक्ष की हिंसा है। इसीलिए वेद कह रहा है–

अन्तरिक्षं मा हिंसीः।

वेद के ऋषि को यह पता है कि यदि भूमि द्यौ, अन्तरिक्ष, जल, वनस्पति आदि दूषित हो जायेंगे तो जीवन दूभर हो जाएगा। इसीलिए वेद इन सभी की शान्ति की बात करता है। सुप्रसिद्ध शान्ति मन्त्र (**द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः०।**) का प्रयोजन मात्र इतना ही नहीं है कि किसी क्रिया–कलाप के अन्त के इसे बोल लिया जाए। इस मंत्र में पृथिवी, अन्तरिक्ष आदि उन तत्त्वों का परिगणन किया गया जिन पर हमारा जीवन निर्भर है। पृथिवी, जल, वनस्पति, ओषधि आदि तत्त्वों की शान्ति की बात कही गई है। इन तत्त्वों को प्रदूषण मुक्त रखना ही उनकी शान्ति है। इन्हें प्रदूषण मुक्ति रखने का एक ही साधन है–यज्ञ। कदाचित इसी अभिप्राय से ऋग्वेद में द्यौः तथा पृथिवी को 'यज्ञियासः' कहा गया है?

आज वायु तथा नदियों के प्रदूषण को दूर करने के लिए करोड़ों रुपया व्यय करने के यत्न किए जा रहे हैं, तथापि ये शुद्ध नहीं हो पा रहे हैं। गंगा नदी को दूध से शुद्ध करने की चेष्टा हो रही है, किन्तु यह व्यर्थ है। इनकी शुद्धि का एकमात्र साधन यज्ञ है। यज्ञ में डाली गई आहुति अग्नि में पड़कर सूक्ष्म स्वरूप को धारण करके पृथिवी, जल, अन्तरिक्ष, वायु, वनस्पति, ओषधि सबको ही शुद्ध कर देती है। इसी कारण भारतीय मनीषियों ने अनेक प्रकार के यज्ञों को मानव–जीवन का अंग ही बना दिया है। इस सन्दर्भ में अनेक प्रकार के पाक्षिक, मासिक इत्यादि दीर्घयज्ञ तो किए ही जाते हैं इनके साथ **दैनिक अग्निहोत्र को सभी के लिए अनिवार्य घोषित करते हुए इसे महायज्ञ की संज्ञा प्रदान की है।** ऐसा इसलिए कि मनुष्य दैनिक जीवन में अपने शरीर में श्वास, पसीना, मल–मूत्र तथा अन्य शारीरिक मैल के रूप में जितनी गन्दगी उत्पन्न करता है, इसका शोधन तो उसे करना ही चाहिए। यह उसका धर्म है। दैनिक अग्निहोत्र से उसके पास का 800 वर्गमीटर क्षेत्र शुद्ध हो जाता है। यदि प्रत्येक व्यक्ति नियम से दैनिक अग्निहोत्र करने लगे तो पर्यावरण की समस्या उत्पन्न ही न हो। यहाँ पर यह भी अवधेय है कि पशु–पक्षी भी अपने शरीरों से पर्याप्त गन्दगी उत्पन्न करते हैं किन्तु ये यज्ञ नहीं कर सकते। अतः इसका शमन भी मानव द्वारा प्रतिदिन किए जाने वाले यज्ञ से ही सम्भव है। इसके शुद्धिकरण की प्रक्रिया यह है कि अग्निहोत्र दूषित वातावरण में पोषक तत्त्वों को उत्पन्न करता है, जिससे वायु शुद्धि के साथ–साथ ऑक्सीजन की चक्रण प्रणाली में भी सन्तुलन उत्पन्न होता है। सामग्री में दूध, घृत, मखाने, दाख, अखरोट आदि पुष्टिकारक पदार्थ इसी उद्देश्य से डाले जाते हैं। ये पोषक तत्त्व केसर, कस्तूरी, अगर, तगर चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्यों के साथ मिलकर दूषित वायु को शुद्ध करते हैं। यज्ञिय अग्नि में ही इतना सामर्थ्य है कि वह दूषित वायु को उस स्थान से बिल्कुल नष्ट करके वहाँ के वातावरण को शुद्ध कर दे इस अग्निहोत्र के द्वारा ही ऑक्सीजन की चक्रण प्रणाली में सन्तुलन उत्पन्न किया जाता है।

पर्यावरण की समस्या पर विचार करते हुए मानव की प्रकृति पर भी विचार करना होगा जिसके कारण यह समस्या उत्पन्न हुई है। आज मानव ने अपने स्वार्थवश भूमि, जल, वन, पर्वत, नदी आदि प्राकृतिक पदार्थों का दोहन प्रारम्भ कर दिया है। इतना ही नहीं, अपितु अपने आपको सर्वश्रेष्ठ प्राणी घोषित करते हुए वह न केवल प्रकृति अपितु पशु–पक्षियों को भी अपने उपयोग की वस्तु समझता है। यह धारणा सर्वथा अवैदिक है। प्राचीनकाल में

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

महर्षि दयानन्द जी का एक महत्त्वपूर्ण मन्तव्य

● भावेश मेरजा

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने एक अति महत्त्वपूर्ण विज्ञापन में लिखा था –

"सब को विदित हो कि जो–जो बातें वेदों की और उनके अनुकूल हैं, उनको मैं मानता हूं – विरूद्ध बातों को नहीं। इससे जो–जो मेरे बनाये 'सत्यार्थप्रकाश' वा 'संस्कारविधि' आदि ग्रन्थों में गृह्यसूत्र वा मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुत से लिखे हैं, वे उन–उन ग्रन्थों के मतों को जनाने के लिए लिखे हैं। उनमें से वेदार्थ के अनुकूल का साक्षिवत् प्रमाण और विरुद्ध का अप्रमाण मानता हूँ।"

(सन्दर्भ ग्रन्थः 'ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन', प्रथम भाग, पूर्ण संख्या 101, तृतीय संस्करण)

इसलिए महर्षि दयानन्द जी रचित सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि आदि ग्रन्थों में उद्धृत किए गए परतः प्रमाण कोटि के पुरातन संस्कृत ग्रन्थों के वचनों के सन्दर्भ में विचार या समालोचना करते समय हमें इस विज्ञापन को सदैव ध्यान में रखना चाहिए। तभी लेखक (दयानन्द जी) से न्याय किया जा सकता है, अन्यथा नहीं।

8–17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,
जि. भरूच, गुजरात–392015
मो. 9879528247

☞ पृष्ठ 02 का शेष

प्रभु दर्शन

आभास हुआ। स्वभाव के अनुसार उनके हाथ तिपाई की ओर बढ़े कि दाँत लगा लें, परन्तु वहाँ दाँत नहीं थे। तिपाई के ऊपर–नीचे, इधर–उधर देखा, सिरहाना भी उलट–पलटकर देख लिया, परन्तु दाँत नहीं मिलें। अचानक उनके मन में विचार उठा, 'शायद मैं रात मुँह से दाँत निकालने भूल गया था। हो न हो, सोते–सोते दाँत गले में से होकर पेट में पहुँच गए हैं और मेरी अंतड़ियों को काट रहे हैं। पेट की यह पीड़ा इसी कारण है।' यह विचार मन में आते ही पीड़ा बढ़ने लगी। कुछ ही क्षणों में पीड़ा असह्य हो उठी और पादरी महोदय कराहने लगे। चीखने–चिल्लाने की आवाज़ सुनकर पादरी की पत्नी दौड़ी आई। पति की यह अवस्था देखकर वह घबरा उठी और टेलीफोन करके शहर से एम्बुलेंस कार मँगवाकर पति महोदय को अस्पताल भेज दिया। डॉक्टरों ने पादरी से कहानी सुनी तो कहने लगे, "पादरी साहब, यह असम्भव है। आपका गला कोई हाथी का गला नहीं है कि दाँतों का पूरा सेट पेट में पहुँच जाय।" डॉक्टरों ने बहुतेरा समझाया, परन्तु पादरी के मन में एक बार जिस विचार ने घर कर लिया था, वह बदल नही सका। पादरी ने क्रोधित होकर कहा, मैं दर्द से मरा जा रहा हूँ और तुम भाषण ही दिये जा रहे हो। ऑपरेशन करके यदि आप मुझे बचा सकते हैं तो बचा लीजिये, अन्यथा बातें न बनाइये!"

डॉक्टरों ने देखा कि पादरी का वहम दूर नहीं होता तो वे उन्हें ऑपरेशन–रूम में ले गए। चीर–फाड़ का सब सामान जुटा लिया गया और ऑपरेशन करने के लिए दरवाज़ा बन्द करके पादरी को क्लोरोफार्म देने लगे तो अचानक किसी ने दरवाजे पर दस्तक दी। दरवाज़ा खोला गया तो चपरासी ने एक तार दिया। तार पादरी की पत्नी का था, जिसमें लिखा था, "दाँत दूसरे कमरे से मिल गए हैं। बिल्ली उठाकर ले गई थी।" तार पढ़के डॉक्टरों के ओठों पर तो हँसी खेलनी ही थी, पादरी भी अपना दर्द भूलकर एकदम उठ बैठा, कहने लगा, "जब मैं इस मेज़ पर लेटा तो पेट की पीड़ा कम होने लगी थी। अब तो पीड़ा बिल्कुल ही नहीं है।"

मन के संकल्प–विकल्प का मनुष्य के तन पर कितना प्रभाव पड़ता है, इसका उल्लेख डॉक्टर टुके ने भी अपनी पुस्तक *"इन्फ्लुएन्स ऑफ द' माइंड अफॉन द' बॉडी"* में किया है। वे लिखते हैं, "कितने ही रोग केवल भय से और भय के विभिन्न रूपों से पैदा होते हैं। पागलपन, मूढ़ता, विभिन्न अंगों का निकम्मा हो जाना, अत्यधिक स्वेदन, पित्तप्रकृति, पाण्डु रोग, बालों का शीघ्र ही श्वेत हो जाना, गंजापन, दाँतों का गिरना, रक्तहीनता, घबराहट, मूत्राशय के रोग गर्भाशय में पड़े बच्चे का अंग–भंग हो जाना, चर्म–रोग, फुन्सियाँ, फोड़े तथा एग्ज़ीमा आदि कितने ही स्वास्थ्यनाशक रोग केवल मानसिक क्षोभ तथा भय से ही पैदा होते है। ("Many diseases are produced by fear in its various forms. Insanity, idiocy, paralysis of various muscles and organs, profuse perspirations, cholerina, jaundice, turning of the hair grey in the short time, baldness, sudden decay of the teeth, nervous shocks followed by fatal annemia, uterine troubles, malformation of embryo through the mother, skin diseases are produced by these terrible health enemies.")

एक ही रात में बालों के सफेद हो जाने की घटना मैंने अपनी आँखों से देखी है। 1930–31 की बात है। मेरे बड़े सुपुत्र श्री रणवीर को गवर्नर पर गोली चलाने के अभियोग में फाँसी का दण्ड हुआ था। रणवीर जी तब लाहौर सेंट्रल जेल में फाँसी की कोठरी में कैद थे और मैं उन्हें उपनिषद् सुनाने के लिए जाया करता था। वहीं एक नैतिक बन्दी भी था, जिसे एक स्त्री के कारण दो व्यक्तियों को मौत के घाट उतारने के अपराध में फाँसी का दण्ड दिया हुआ था। सैशन जज के इस निर्णय के विरुद्ध उसने हाईकोर्ट में अपील कर रखी थी। उसे विश्वास था कि हाईकोर्ट से वह छूट जाएगा, परन्तु अपील नामंजूर हो गई। शाम को जब मैं रणवीर को उपनिषद् सुना रहा था, तब उसे यह समाचार सुनाया गया। तब उसके बाल स्याह काले थे। अगले दिन जब मैं फिर गया तो उसके बाल सफेद हो चुके थे। तीस वर्ष का वह युवक रात में साठ वर्ष का बूढ़ा हो गया। निश्चित मृत्यु सामने खड़ी देखकर वह रात–भर सो नहीं सका। भय और चिन्ता के संकल्प ने कुछ ही घण्टों में उसकी समस्त शक्ति हर ली।

इतना प्रबल होता है संकल्प!

क्रमशः

☞ पृष्ठ 05 का शेष

पर्यावरण की समस्या ...

ऋषियों ने प्रकृति अर्थात् प्राकृतिक पदार्थों के साथ तादात्म्य बनाया हुआ था। प्रकृति का मानवीकरण किया हुआ था। जड़ होते हुए भी उनमें चेतन प्राणी के समान आदर बुद्धि स्थापित की थी। रात्रि में वृक्ष सोते हैं, अतः इन्हें काटना नहीं चाहिए जन–जन में फैली यह धारणा प्रकृति के मानवीकरण का ही परिणाम है। अथर्ववेद में **'वनस्पते जीवानां लोकमुन्नय'** कह कर वनस्पति से लोकजीवन को उन्नत बनाने की प्रार्थना की गयी है। ऋग्वेद के 'अरण्यानी सूक्त' में वन की महत्ता का विशद चित्रण किया गया है। अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में हरे भरे वनों एवं पर्वतों से आच्छादित पृथिवी की कामना की गई है। (**गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु** (अथर्व. 12.1.11)) यहीं पर यह भी कहा गया है कि भूमि पर वृक्ष तथा वनस्पतियाँ स्थायी रूप में खड़े रहें। (**यस्यां वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्वहा** (अथर्ववेद. 12.1.27)) इन्हें कोई नष्ट न कर पाए। यजुर्वेद में औषधियों के मूल को नष्ट न करने की कामना की गयी है। वहीं पर जलों के उद्गम स्थानों को नष्ट न करने की बात भी कही है। (**पृथिवि देवयजन्योषध्यास्ते मूलं मा हिंसिषम्** (यजु. 1.25)) अथर्व. 5.4.22 में पीपल को **'देवानाम् सदनमसि'** कहकर उसमें देवों का वास बतलाया गया है। सम्भवतः यही कारण है कि लोक में पीपल की पूजा की जाती है। जंगल–जलेबी के वृक्ष में तेजाबी वर्षा से मुक्ति दिलाने की क्षमता है, क्योंकि यह वृक्ष वर्षा के मुख्य घटक सल्फर डाईऑक्साइड की सान्द्रता को 80 प्रतिशत तक सोख लेता है। इसी प्रकार चीड़ का वृक्ष मिट्टी से वैरीलियम धातु को तथा सेम व मटर के पौधे भूमि से 'मालिन्डिनम' जैसी भारी धातुओं के प्रदूषण से भूमि को मुक्त करते हैं। (**मापो मौषधीर्हिंसीः** (यजु. 6.22)) इस प्रकार वन सम्पदा से जहाँ हमें फलों, लकड़ियों तथा ओषधियों की प्राप्ति होती है वहाँ वन पर्यावरण रक्षा का भी सशक्त एवं अपरिहार्य साधन हैं। वेद में इसी दृष्टि से **'वनानां पतये नमः'** तथा **'नमो वृक्षेभ्यो'** कहकर उनके रक्षकों को आदर दिया गया है।

पर्यावरण प्रदूषण तभी दूर हो सकता है जबकि हम प्राकृतिक सम्पदा की रक्षा करें, न कि उसका दोहन मात्र करते रहें। इसी दृष्टि से गीता में कहा गया है कि इस जड़–चेतन दोनों को हमें हवि के दान से तृप्त करना चाहिए, जो ऐसा नहीं करता, वह चोर है। देवों तथा मानव के बीच यह आदान प्रदान का चक्र चलता रहता है कि हम उन्हें यज्ञ से तृप्त करते हैं तथा बदले में वे हमें विविध भोगों को प्राप्त कराते हैं। जो इस चक्र का अनुवर्तन नहीं करता, गीता की परिभाषा में यह अघायु है –

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ
स जीवति।।

बी–266 सरस्वती विहार,
नई दिल्ली–110034
मो. 9627020557

गतांक से आगे ...

स्वामी दयानन्द की दो भारी भूलें

● स्मृति शेष गंगा प्रसाद उपाध्याय

दूसरी भूल है वेदों के विषय में। यहाँ यह प्रश्न नहीं कि वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं या नहीं। इसकी मीमांसा के लिए प्रो. बालकृष्ण जी का 'ईश्वरीय ज्ञान वेद' नामक पुस्तक देखिए, इसके विषय में सैकड़ों प्रमाण हैं। परन्तु यहाँ विषय की जातीय उपयोगिता का प्रश्न है। मेरा विश्वास है कि यहाँ भी स्वामी दयानन्द ने बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है। यदि कहीं वे ब्रह्मसमाज या प्रार्थनासमाज या थियोसोफीकल सोसायटी के समान वेदों को छोड़ बैठते तो आर्यसमाज की नींव रेत पर होती। शायद उनको क्षणिक सफलता प्राप्त हो जाती। परन्तु वस्तुतः देखा जाय तो आर्यसमाज के विशाल भवन की सच्ची आधारशिला है तो वेद है। वेदों पर अब भी हिन्दू जाति की कुमारी अन्तरीप से गंगा पर्वत तक और अटक से कटक तक किसी न किसी रूप में श्रद्धा है। बंगाल के बंगला भाषा बोलनेवाले, मद्रास के तमिल और आन्ध्र के तेलगुभाषी, गुजरात तथा महाराष्ट्र के गुजराती और मराठी बोलनेवाले, सभी वेदों पर श्रद्धा रखते हैं। वेदों में ऐसे रत्न हैं जिनको पाकर हिन्दू जाति फिर भी गए हुए गौरव को प्राप्त कर सकती है। इन वेदों से श्रद्धा हटाकर आप इनको कहाँ ले जाएँगे? आज ब्रह्मसमाज की अवस्था पर विचार कीजिए। वेदों को छोड़कर उन्होंने उपनिषदों का मान किया, फिर उसमें ईसाई धर्म से भी कुछ ऋण लिया गया, फिर होते–होते अब यह एक खिचड़ी रह गई है। यही प्रार्थनासमाज का हाल है। ये ऐसे निराधार भवन हैं जो हिन्दू जाति के उत्थान से पूर्व ही नष्ट हो जाएँगे? थियोसोफीकल सोसायटी की तो कथा ही अलग है। इनसे पूछो "तुम्हारे सिद्धान्त क्या हैं?" कोई निश्चित सिद्धान्त नहीं जो सर्वसाधारण को कुछ प्रकाश दे सकें। "हम सबमें हैं और किसी में नहीं।" दक्षिण में 'सत्यशोधक समाज' का भी यही हाल है। उनका अभिमान है कि हम संकुचित (Dogmatic) नहीं बनना चाहते; हम सत्य की खोज करते हैं। परन्तु उनको यह पता नहीं है कि सत्य के खोज करनेवाले विरले ही होते हैं। हमारे कई सत्यशोधक मित्र वेदों पर आक्षेप करते हैं। उन्होंने स्वयं वेद नहीं पढ़े। मैक्समूलर आदि से लेकर आक्षेप करते हैं। यह सत्यशोधकपन नहीं है। हम कम से कम स्वामी दयानन्द जैसे संस्कृतज्ञ ऋषि के आधार पर कहते हैं, परन्तु वे यूरोपियनों के आधार पर। अब पूछना चाहिए कि किसके आधार के सुदृढ़ होने की अधिक सम्भावना है? यूरोपियन लोगों का तो स्वार्थ भी हो सकता है, स्वामी दयानन्द का क्या स्वार्थ? फिर यदि एक स्वामी दयानन्द ऐसा कहते, तो भी शायद कुछ आक्षेप का अवसर होता। यहाँ सभी दर्शनकार, सभी स्मृतिकार, सभी उपनिषत्कार, महाभारत, रामायण तथा गीता आदि के बनानेवाले सभी वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानकर चलते हैं। इससे प्रतीत होता है कि वेदों की जड़ें पाताल तक पहुँच गई हैं और इनके काटने की कोशिश करना हिन्दू जाति की जड़ काटना है। जिसको हमारा आधुनिक शिक्षितवर्ग 'संकुचितता' बताता है, उसी जड़ को हरा रखने के लिए हमारे पूर्वजों ने अनेक कष्ट सहे, सैकड़ों महापुरुषों ने अपने रक्त से इसको सींचा और अनेक ने आयुपर्यन्त तपस्याएँ कीं। वेद हम तक सुगमता से नहीं आ गए। वेदों की रक्षा के लिए हिन्दू जाति को बहुत बड़ा मूल्य देना पड़ा है और मैं समझता हूँ कि इस समय भी इस ऋषि–ऋण को चुकाने के लिए उसमें पर्याप्त बल है। जो हिन्दू जाति गिरे हुए समय में भी स्वामी दयानन्द जैसे तपस्वी को उत्पन्न करती है, उसके मरने का कोई चिह्न नहीं है। यह सब वेदों का ही फल है। संसार की अनेक जातियाँ उठीं और मर गईं। पुरानी मिश्र जाति का अब कोई चिह्न नहीं रहा। असीरियावाले न जाने कहाँ लुप्त हो गए। कैल्डियावालों का नामलेवा कोई नहीं रहा। यह सब इसी कारण हुआ कि इनके सुधारकों तथा नेताओं ने मूल को छोड़कर वृक्ष की डालियों को सींचना आरम्भ कर दिया और क्षणिक लाभ के लिए स्थायी लाभ से हाथ धो बैठे। इसी प्रकार इन जातियों ने किया होगा। ये भले मानस यह नहीं समझते कि ऐसा करने से स्वराज्य तो मिलेगा नहीं, तुम्हारी जातीयता की जड़ अवश्य कट जाएगी। यही प्रत्यक्ष हमारे सामने आ रहा है। मैं यह नहीं कहता कि क्षणिक लाभों की परवाह मत करो। मेरा कहना तो यह है कि उन क्षणिक लाभों की भी परवाह मत करो जो तुम्हारे चिरस्थायी लाभों की जड़ काटते हैं।

जिस समय हम विचार करते हैं कि स्वामी दयानन्द के सामने मूर्तिपूजा–खण्डन और वेदों के त्यागने के लिए कितने भारी प्रलोभन थे, दो शर्तों पर समस्त भारत उसका अनुयायी होने के लिए तैयार था, फिर भी उन्होंने उन क्षणिक प्रलोभनों पर लात मार दी तो हमारा सिर ऋषि के तपोबल के सामने स्वभावतः झुक जाता है। यदि स्वामी दयानन्द ऐसे न होते तो वे ऋषि कहलाने के कदापि योग्य न होते। उनमें और साधारण सुधारकों में कोई भेद न होता। अभी ऋषि दयानन्द के बलिदान को 65 वर्ष ही हुए हैं। (**यह ग्रन्थ छपते समय तक महर्षि का बलिदान हुए 116 वर्ष हुए हैं।–सम्पादक**) अभी समय इतना निकट है कि हमको उनका वास्तविक स्वरूप दिखाई नहीं पड़ता। जब कई शताब्दियाँ व्यतीत हो जाएँगी उस समय ऋषि के गौरव को भली प्रकार समझ सकेंगे।

जो लोग आर्यसमाज पर संकुचित (Dogmatic) होने का दोष लगाते हैं, वे यह नहीं जानते कि अ–नियमिता का नाम उदारता नहीं है। किसी समाज के संगठन के लिए निश्चित सिद्धान्तों की बहुत बड़ी आवश्यकता है। हिन्दू जाति के वर्तमान असंगठन का बहुत बड़ा कारण यह है कि इसके सिद्धान्त निश्चित नहीं रहे। जो आया उसने मनमानी की और जाति के टुकड़े–टुकड़े हो गए। ऋषि दयानन्द ने इसी रोग का निराकरण किया और समस्त जाति को एक सूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया। जब तक आर्यसमाज ऋषि के बताए हुए नियमों पर कटिबद्ध रहेगा उसकी उन्नति ही होती जाएगी, परन्तु जिस प्रकार ऋषि दयानन्द ने चिरस्थायी लाभ के लिए क्षणिक लाभों की परवाह नहीं की, उसी प्रकार आर्यसमाज को भी दृढ़ रहना चाहिए। जो लोग धूप और वर्षा से बचने के लिए कपड़े के तंबू बना रहे हैं उन्हें बनाने दो। उनको इस समय अवश्य कम व्यय पड़ेगा परन्तु ये तम्बू एक–दो वर्ष में ही फट जाएगा। आर्यों को चाहिए कि स्वामी दयानन्द के आदेशानुसार पक्का भवन बनाने में लगे रहें। चाहे कितने भी दिन क्यों न लगें, चाहे कितना ही धन क्यों न व्यय हो, परन्तु यदि लाभ देगा तो यही भवन देगा। इसी की छत के नीचे आनेवाली सन्तानें सुख में बैठ सकेंगी। यदि कहीं आर्यों ने प्रलोभनों में फँसकर वेदों को छोड़ दिया तो न केवल भारतवर्ष और हिन्दू जाति की ही हानि होगी किन्तु समस्त भूमण्डल की मनुष्य–जाति एक अपूर्व लाभ से वंचित रहेगी।

ईसाई और मुसलमान धर्म आजकल ऐसे चमत्कृत दिखाई पड़ते हैं, पर कपड़े के तंबुओं से अधिक नहीं है। वर्षा और आँधी ने इनकी खूँटियों को अभी हिला दिया है। जब ये फटेंगे तो इनके नीचे बैठनेवालों को कहाँ आश्रय मिलेगा?

आर्यो! अपना भवन बनाने में लगे रहो। जो इस समय तुम्हारी मूर्खता पर हँसते और स्वामी दयानन्द की भूलों पर आश्चर्य करते हैं वही किसी दिन तुमको आशीर्वाद और धन्यवाद देंगे जैसे तुम प्राचीन ऋषियों को देते हो। हे ईश्वर! **बलमसि बलं मयि धेहि।** (यजुर्वेद 19/9) आप बल हैं हमको बल दीजिए।

गंगा ज्ञान सागर से साभार

☞ पृष्ठ 04 का शेष

महर्षि स्वामी ...

हुए, जिन्होंने मानव जाति को सुखी, समृद्ध, विकसित बनाने के लिए सामाजिक, साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनीतिक और भौतिक विज्ञान आदि के क्षेत्र में विशेष कार्य किया। अपने समय और स्थान पर जिसने जिस भी क्षेत्र में जैसा योगदान दिया है। वह अपने योगदान के अनुरूप सभी के सम्मान का पात्र है। क्योंकि उन व्यक्तियों का योगदान ही आज के विकसित रूप को यहाँ तक पहुँचाने में सहयोगी बना है। जैसे कि राइट बन्धुओं द्वारा वायुयान विषयक किया गया प्रयास आज के विकसित वायुयानों के विकास में कारण बना है।

जिस महापुरुष ने जितने तप–तपकर जैसे–कैसे कष्ट सहकर जितनी शिक्षा, योग्यता अर्जित की तथा अपनी अर्जित योग्यता से संयम के साथ मानव जाति के हित का जैसा कार्य किया। वह तदनुरूप सत्कार के योग्य है। वस्तुतः जनता को जितना लाभ हुआ, यह बात जहाँ महत्त्व की है, वहाँ सेवा करने वाले ने कितने संयम से सेवा की, यह एक विशेष बात है। क्योंकि विकार के अवसर आने पर भी अपने आप को जो भ्रष्ट नहीं होने देते, वे और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

महापुरुषों द्वारा विविध क्षेत्रों में किए गए महान् कार्यों के प्रति अपनी कृतज्ञता अवश्य प्रकट करनी चाहिए। हाँ, अब क्या अनुकरणीय है और क्या केवल स्मरणीय है? इसका निर्णय तो आज की विकसित परिस्थिति के अनुरूप ही होना चाहिए, न कि केवल अपनेपन के आधार पर या प्राचीनता से। इसीलिए महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी रचनाओं में श्रीराम, कृष्ण, भोज, शिवा, ईसा, नानक आदि की उस–उस विशेष देन के कारण प्रशंसा की है। बिना किसी यथार्थ आधार के किसी भी महापुरुषों की निन्दा करने वालों की निन्दा की है और इसी दृष्टि से भी पुराणों को पसन्द नहीं किया। क्योंकि वहाँ अधिकतम की अपने से भिन्न होने के कारण निन्दा प्राप्त होती है।

इस संक्षिप्त चित्रण से जहाँ यह स्पष्ट हो जाता है, कि ऋषि दयानन्द का तत्त्वबोध सर्वथा शास्त्र सम्मत और तर्क संगत होने से सुसंगत पथ कहा जा सकता है। हाँ, 'गहरे पानी पैठ' वाले पाठक अनुभव करते होंगे, कि यहाँ हर बात को ऐसे कहा गया है, जैसे कि किसी को बोलते–बोलते रोक दिया गया हो। ऐसी स्थिति में पाठक की स्थिति प्रतीक्षा के उसी रूप को धारण कर लेती है। जिसके लिए कहा जा सकता है–

बड़े गौर से पढ़ रहे थे पढ़ने वाले।
पर क्यों रुक गए लिखते–लिखते।।

ऐसी प्रतीक्षा भरे पाठकों से निवेदन है, कि वे 'सुसंगत जीवन पथ–महर्षि दयानन्द प्रदर्शित' पढ़ें।

बी–2, 97/7 शालीमार नगर
होशियारपुर, पंजाब–146001

आस्तिकवाद

● डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री

सन्दर्भ–ऋषि दयानन्द रचित सत्यार्थप्रकाश के द्वादश–समुल्लास का विषय नास्तिक मतों के अन्तर्गत चार्वाक–बौद्ध तथा जैन मत के खण्डन–मण्डन विषयक व्याख्या है। प्रकृत संवाद जैनियों के 'प्रकरण रत्नाकर' भाग–2 के प्रश्नोत्तर से सम्बन्धित है। स्वामी वेदानन्द द्वारा सम्पादित स्थूलाक्षर सटिप्पण सत्यार्थप्रकाश के संस्करण में इस स्थल पर दी गई टिप्पणी महत्त्वपूर्ण है। जिसके अनुसार–"प्रकरणरत्नाकर नामक ग्रन्थ, भाग–2 शाह भीमसिंह माणकं द्वारा निर्णय सागर प्रेस, बम्बई में वि.सं. 1933 (1876 ई.) में प्रकाशित हुआ था। 'प्रकरण रत्नाकर' भाग–2, पृष्ठ 177 से 211 तक यह संवाद है। जैन अपने को आस्तिक तथा ईश्वरवादियों को नास्तिक कहते हैं। सत्यार्थप्रकाशकार ने उसका यहाँ संक्षेप दिया है तथा आस्तिक के स्थान पर नास्तिक और नास्तिक के स्थान पर आस्तिक कर दिया है। अर्थात् 'प्रकरण रत्नाकर' के पूर्वपक्ष को उत्तरपक्ष और उत्तरपक्ष को पूर्वपक्ष कर दिया।" 'आस्तिकवाद' नामक यह अध्याय 'सत्यार्थप्रकाश' के उक्त स्थल के आधार पर लिखा गया है।

नास्तिक–ईश्वर की इच्छा से कुछ नहीं होता, सब कुछ कर्म के आधार पर होता है।

आस्तिक–यदि सब कुछ का आधार कर्म है तो कर्म किससे होता है। यदि कर्म जीव द्वारा होता है, तो जीव के श्रोत्र, चक्षु आदि साधनों से ही कर्म सम्पन्न होता है, तब उन श्रोत्रादि साधनों का आधार क्या है। यदि ये साधन और जीव अनादि हैं अर्थात् इन श्रोत्रादि साधनों तथा जीव का काल और स्वभाव अनादि है, तो जीव और जीव के साधन चक्षुरादि का बन्धन से छुटना असम्भव होगा अनादि होने के कारण। बन्धन से न छुट पाने से मुक्ति का भी अभाव हो जायेगा। यदि जीव और उसके साधन चक्षु, श्रोत्र आदि को 'प्रागभाव' के समान अनादि और सान्त माना जाए तो बिना कोई प्रयास के सभी जीवों के कर्म स्वतः निवृत्त हो जाएँगे। फिर उसके लिए जैन आदि मतों का अवलम्बन लेना व्यर्थ है।

नास्तिक–जीव अपने पाप–पुण्य का फल दुःख–सुख के रूप में स्वयं भोगता है, उसके फल का आधार उसके पाप–पुण्य रूपी कर्म है। अतः ईश्वर को फल प्रदाता के रूप में तथा एक अनादि सत्ता के रूप में मानने की कोई आवश्यकता नहीं है।

आस्तिक–यदि हमारे कर्मों के फल को प्रदान करनेवाला ईश्वर न हो तो कोई भी जीव अपने पाप रूपी कर्म का फल दुःख को अपनी इच्छा से क्यों भोगता? हम देखते हैं कि संसार में कोई चोर अपने चोरी कर्म का फल कारावास आदि का दण्ड अपनी इच्छा से नहीं भोगता है। राज्य व्यवस्था से ही चोर आदि अपने दुष्कर्मों का फल दण्ड के रूप में भोगते हैं, उसी प्रकार जीव भी अपने पाप कर्मों का फल ईश्वर की न्याय व्यवस्था से इन जन्म में तथा जन्मान्तर में भोगते हैं। इसी प्रकार जीव अपने पुण्य कर्मों का सुखरूपी फल भी ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार प्राप्त करता है। अन्यथा कर्म अचेतन है, वे फलकाल में कैसे पहचानेंगे कि हम किस जीव के कर्म हैं। फल प्रदाता ईश्वर को न मानने पर 'कर्म संकर' हो जाएगा अर्थात् एक जीव का कर्म दूसरे जीव के साथ सम्बन्धित हो जायेगा।

नास्तिक–जगत् को बनानेवाले ईश्वर को मानने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि ईश्वर कोई कर्म नहीं करता। यदि वह कर्म करेगा तो उसे कर्म का फल भी भोगना पड़ेगा। इसलिए हम केवली–प्राप्त मुक्तों को अक्रिय मानते हैं। इसलिए आपको भी ईश्वर को अक्रिय मानना चाहिए।

विशेष–ज्ञातव्य है कि यह **'नास्तिक–आस्तिक संवाद'** का सन्दर्भ जैनमत के आधार पर है। जैन मतानुसार 'जीव ही परमेश्वर हो जाता है।' जैनी लोग अपने तीर्थंकरों को ही केवली मुक्तिप्राप्त और परमेश्वर मानते हैं।

आस्तिक–यह जड़ जगत् बिना चेतन ईश्वर के नहीं बन सकता, क्योंकि जगत् के जड़ होने से जड़ में स्वयं बनने का सामर्थ्य नहीं है। ईश्वर के अतिरिक्त अल्पज्ञ और अल्पशक्ति जीव में जगत् बनाने का सामर्थ्य नहीं है इससे यही सिद्ध हुआ कि परमात्मा ही जगत् को बनाता है। नित्य शुद्ध–बुद्ध–मुक्त स्वभाव होने से ईश्वर जगत्कर्त्ता होकर भी जगत् में फँसता नहीं है। जीव ही अल्पज्ञ होने से राग–द्वेष आदि मलीन कर्मों को करता हुआ बन्धन में फँसकर पाप–पुण्य का फल दुःख–सुख प्राप्त करता है। ईश्वर चेतन होने से कर्त्ता है, क्योंकि चेतन पदार्थ अकर्त्ता नहीं हो सकता। कर्त्ता कभी क्रिया से पृथक् नहीं होता। अतः ईश्वर अक्रिय या निष्क्रिय नहीं है। तीर्थंकर के जीव होने से वे कभी ईश्वर नहीं हो सकते।

यदि जीव ईश्वर बन जाता है तो वह अनित्य और पराधीन होगा क्योंकि वह जीव ईश्वर बनने के पूर्व जीव ही था, किसी निमित्त से ईश्वर बना है। अतः वह परिणामी होने से अनित्य है। जिस निमित्त से जीव ईश्वर बनेगा उसी निमित्त से पृथक् होने से वह पुनः जीव बन जाएगा। अतः जीव उस निमित्त के अधीन होने से पराधीन हो जाएगा।

वस्तुतः जीव कभी भी ईश्वर नहीं बन सकता क्योंकि वह अनादि और अनन्त है अनादि अनन्तकाल पर्यन्त रहनेवाला जीव अपना जीवत्व स्वभाव नहीं छोड़ सकता। फिर जीव को जिन कर्मों के कारण ईश्वर बनना आप (जैनी) मानते हैं, उन कर्मों को आप 'प्रागभाव' के समान 'अनादि' और 'सान्त' भी मानते हैं। अनादि और सान्त कर्म ईश्वर या जीव में समवाय सम्बन्ध से नहीं रहेगा। कर्म ईश्वर के साथ संयोग सम्बन्ध से रहने पर संयोगज होने के कारण अनित्य होगा क्योंकि समवाय सम्बन्ध ही नित्य होता है। जैसे गुण–गुणी में, अवयव–अवयवी में, जाति–व्यक्ति में समवाय सम्बन्ध होने से नित्य सम्बन्ध होता है।

मुक्ति में जीवों को क्रियाहीन मानना भी ठीक नहीं है क्योंकि मुक्त जीव ज्ञानवान् होते हैं। ज्ञानवान् जीव अन्तःक्रियावान् अवश्य होगा। यदि मुक्ति में जीव को अज्ञानी और पाषाणवत् जड़ माना जाए तो निश्चेष्ट जीव की मुक्ति क्या हुई? अज्ञानी और जड़ जीव के लिए वह मुक्ति भी अन्धकार और बन्धनस्वरूप हो गई।

नास्तिक–ईश्वर व्यापक नहीं है। यदि वह व्यापक है तो उससे व्याप्य सभी वस्तु को (ईश्वर के चेतन होने से) चेतन होना चाहिए। समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आदि की उत्तम–मध्यम–निकृष्ट व्यवस्था भी क्यों हैं? क्योंकि ईश्वर सभी में एक समान व्यापक है।

आस्तिक–व्याप्य और व्यापक एक कभी नहीं होते। व्याप्य एकदेशी और व्यापक सर्वदेशी होता है। जैसे घट आदि में आकाश व्यापक है और दोनों के गुण पृथक् हैं। व्यापक आकाश अदृश्य और अस्पृश्य है किन्तु घट दृश्य और स्पर्श के योग्य है। पृथिवीस्थ घट–पट आदि पदार्थ एकदेशी और आकाश सर्वदेशी है। घट–पट आदि व्याप्य पदार्थ हैं और आकाश व्यापक है, दोनों एक नहीं है, उसी प्रकार व्याप्त जगत् और इसमें व्यापक ईश्वर एक नहीं है। जैसे–घट–पटादि में आकाश व्यापक है किन्तु घड़ा–कपड़ा (घट–पट) आदि आकाश नहीं है वैसे ही सभी वस्तुओं में चेतन परमेश्वर व्यापक है किन्तु सभी वस्तुएँ चेतन नहीं हैं।

समाज में मनुष्य दो प्रकार के होते हैं–विद्वान् और मूर्ख या धर्मात्मा और पापी। अपने गुण–कर्मों के कारण ही विद्वान् और धर्मात्मा उत्कृष्ट तथा मूर्ख और पापी निकृष्ट माने जाते हैं। उसी प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र अपने–अपने गुण–कर्म–स्वभाव के अनुसार समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र की संज्ञा प्राप्त करते हैं।

विशेष–इस सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि स्वामी दयानन्द ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य–शूद्र की सामाजिक व्यवस्था (वर्णव्यवस्था) का आधार गुण–कर्म–स्वभाव मानते हैं जन्म पर आधारित दूषित–व्यवस्था को नहीं। स्वामी जी ने वर्ण–व्यवस्था की विशद व्याख्या सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में की है।

नास्तिक–ईश्वर ही सृष्टि की रचना करता है तो माता–पिता आदि की आवश्यकता ही क्या है?

आस्तिक–सृष्टि दो प्रकार की होती है–(1) ऐश्वरी (2) जैवी। ऐश्वरी सृष्टि का कर्त्ता ईश्वर है जैवी सृष्टि का नहीं। पृथिवी, सूर्य, चन्द्र आदि और पृथिवी पर वृक्ष, फल, ओषधि, अन्नादि की रचना ईश्वर करता है। ईश्वर रचित, अन्न–फलादि को लेकर कूटना, पीसना भोजनादि का निर्माण जीवों का काम है। इसके बिना जीवों का जीवन भी सम्भव नहीं है।

इसी प्रकार आदि सृष्टि में जीवों के शरीर और साँचे को बनाना ईश्वर का कार्य पश्चात् उनसे पुत्रादि की उत्पत्ति करना जीवों का कार्य है।

निष्कर्षत–अमैथुनी सृष्टि ईश्वर करता है तथा मैथुनी सृष्टि जीव।

क्रमशः

अध्यापक आवास, स्टेशन रोड,
अमेठी, (उ.प्र.)–227405

☞ *पृष्ठ 03 का शेष*

वेद मार्ग ही ...

जो लोग आपकी कृपापूर्ण छाया का सहारा लेतें है। वे चरम ध्येय मोक्षपद को प्राप्त करते हैं। परन्तु जो लोग आपकी अनुकम्पा प्राप्त करने का सौभाग्य नहीं पाते वे जन्म–मरण के दुःखों को भोगते रहते हैं।

Aum. God is imparter of spiritual knowledge and physical strength. The whole world adores him tum whose protection provides emancipation and whose in difference causes all kinds of miseries and death. We should meditate with Faith and devotion upon that God.

योग दर्शन के अनुसार मोक्ष प्राप्ति में पाँच प्रकार के दुःखों को समाप्त करने के पश्चात् ही मनुष्य मोक्षपद प्राप्त कर सकता है। ये दुःख इस प्रकार हैं–अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश। इनसे छुटकारा पाये बिना मोक्ष नहीं मिल सकता अर्थात् मुक्ति नहीं मिल सकती। इसके अतिरिक्त दुःख में सुख यानी विषय, तृष्णा, काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, शोक और द्वेष आदि दुःखरूप व्यवहार में सुख की आशा करना, ब्रह्मचर्य, निष्काम, शम, संतोष, विवेक, प्रसन्नता प्रेम अथवा मित्रता आदि को दुःख मानना भी शास्त्रों में अविद्या माना गया है। इसमें मनुष्य परिवार एवं सम्मान को ही जीवन का लक्ष्य मानने लगता है। इसमें सदाचार की भावना परोपकार, मनुष्यता, उदारता और तितिक्षा सहने की शक्ति समाप्त हो जाती है। ईश कृपा न प्राप्त होने का यह भी एक महत्त्वपूर्ण कारण है। वेदों में मोक्ष का मतलब आत्मा का परमात्मा में विलीन होना बताया गया है। यानी आवागमन के बंधनों से जीव को छुटकारा मिलना मुक्ति है अर्थात् मोक्ष है। न्याय शास्त्र के अनुसार जब अविद्या का नाश हो जाता है तब जीव के सारे दोष नष्ट हो जाते हैं। इससे अधर्म अन्याय विषयों के प्रति लगाव तथा अन्य वासनायें समाप्त हो जाती हैं। इनके

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

भारतीय संविधान का निर्माण तथा विशेषताएँ

● शिवनारायण उपाध्याय

किसी भी देश का संविधान उसकी राजनीतिक व्यवस्था का बुनियादि साँचा–ढाँचा निर्धारित करता है जिसके अन्तर्गत उसकी जनता शासित होती है। संविधान के द्वारा ही विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की स्थापना होती है। संविधान ही उनकी शक्तियों की व्याख्या करता है और उनके दायित्वों का सीमांकन करता है।

लोकतंत्र में प्रभुसत्ता जनता में निहित होती है। आदर्श के रूप में जनता ही स्वयं अपने ऊपर शासन करती है। जब वह अपने आपको एक ऐसा संविधान प्रदान करती है जिसमें उन बुनियादि नियमों की रूप–रेखा दी जाती है जिसके अन्तर्गत राज्य के विभिन्न अंगों को कुछ शक्तियाँ प्रदान की जाती है और जिनका प्रयोग उनके द्वारा किया जाता है तब यह अपनी प्रभुसत्ता का सबसे पहला तथा बुनियादि प्रयोग करती है।

संघीय राज्य व्यवस्था में संविधान अन्य बातों के साथ–साथ एक ओर संघ स्तर पर और दूसरी ओर राज्यों के स्तर पर राज्यों के विभिन्न अंगों के बीच शक्तियों का निरूपण, परिसीमन और वितरण करता है।

प्रत्येक संविधान उसके संस्थापकों को एवं निर्माताओं के आदर्शों, सपनों तथा मूल्यों का दर्पण होता है। भारत में प्राचीन काल से गणतंत्रों का गठन होना पाया जाता है। यजुर्वेद के दशवें अध्याय के प्रथम चारों मंत्रों में गणतंत्र के सभापति के चयन का वर्णन है। अथर्ववेद में राजा का चुनाव विद्वान्, धनवान, निर्धन आदि सभी मिलकर करते हैं ऐसा वर्णन है। राजा के चुनाव में देश के किसी भी भाग का व्यक्ति भाग ले सकता है और चुन लिए जाने पर प्रजा सहर्ष उसे राज सिंहासन पर बैठा देती है। परन्तु महाभारत के बाद देश धीरे–धीरे शक्तिहीन होता गया और विदेशी शक्तियों ने इस पर अधिकार कर लिया और अपने मन–माने नियमों के आधार पर उन्होंने देश पर शासन किया। उन्नीसवीं सदी में भारत में ऐसे महान् पुरुषों का अवतरण हुआ जिन्होंने देश में स्वतंत्रता की अलख लगाई।

सन् 1857 ई. का स्वतंत्रता संग्राम विफल रहा परन्तु स्वतंत्रता की भावना विलुप्त नहीं हुई। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने देश में स्वतंत्रता की भावना को विस्तार दिया। सर्वश्री श्याम जी कृष्ण वर्मा, चापेकर बन्धु, विनायक दामोदर सावरकर, सरदार भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, खुदीराम बोस, प्रतापसिंह बारहट, रामप्रसाद बिस्मिल, भाई परमानन्द, शहीद उधमसिंह, सुभाष चन्द्र बोस आदि ने हिंसक क्रांति द्वारा अपने प्राणों को दाव पर लगाकर देश में उत्तेजना उत्पन्न कर दी। दादा भाई नौरोजी, मदन मोहन मालवीय, बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन्द्र चन्द्र पाल, देशबन्धु चितरन्जनदास, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, सरदार बल्लभ भाई पटेल, राजगोपालाचार्य, पुरुषोत्तमदास टंडन, महात्मा गाँधी आदि ने कांग्रेस का गठन कर आन्दोलन प्रारम्भ किया और अन्त में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में 15 अगस्त 1947 को भारत ने ब्रिटिश दासता से मुक्ति प्राप्त कर ली।

स्वतंत्रता आन्दोलन के मध्य ही काँग्रेस में संविधान निर्माण पर भी विचार प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम 17 मई 1927 को काँग्रेस के अधिवेशन में पं. मोतीलाल नेहरू ने एक प्रस्ताव पेश किया था। उसमें काँग्रेस कार्यकारिणी समिति से केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मण्डलों के निर्वाचित सदस्यों तथा राजनीतिक दलों के नेताओं के परामर्श से भारत के लिए एक संविधान निर्माण करने का आह्वान किया गया था। यह प्रस्ताव कुछ संशोधनों के साथ भारी बहुमत से स्वीकृत हुआ था। 19 मई 1928 को बम्बई में आयोजित सर्वदलीय सम्मेलन ने 'भारत के संविधान के सिद्धान्त निर्धारित करने के लिए' पं. मोतीलाल नेहरू के सभापतित्व में एक समिति नियुक्त की। 10 अगस्त 1928 को पेश की गई समिति की रिपोर्ट नेहरू रिपोर्ट के नाम से प्रसिद्ध हुई। यह भारतीयों द्वारा अपने देश के लिए सर्वांग पूर्ण संविधान बनाए जाने का प्रथम प्रयास था।

कूपलैण्ड ने इसकी बड़ी प्रशंसा की और कहा कि वह 'न केवल इस चुनौती का उत्तर है कि भारतीय राष्ट्रवाद रचनात्मक नहीं है बल्कि भारतीयों द्वारा साम्प्रदायिकता की चुनौतियों का ईमानदारी से मुकाबला करने के लिए किया गया एक सच्चा प्रयास है। रिपोर्ट में न केवल समकालीन राष्ट्रवादी विचारधारा का दृष्टिकोण परिलक्षित होता था बल्कि भारत के संविधान के प्रारूप की एक रूपरेखा भी समाविष्ट थी। संसद के प्रति उत्तरदायी सरकार, अदालतोंद्वारा लागू कराए जा सकने वाले मूल अधिकार, अल्पसंख्यकों के अधिकार, सहित मोटे रूप में जिस संसदीय व्यवस्था की संकल्पना 1928 ई. की नेहरू रिपोर्ट में की गई थी। उसे लगभग ज्यों का त्यों 21 वर्ष बाद 26 नवम्बर 1949 को संविधान समाविष्ट किया गया।

जुलाई 1945 में इंग्लैण्ड में मजदूर दल की सरकार सत्ता में आई। 19 सितम्बर 1945 को वायसराय लार्ड वेवल ने भारत के संबंध में सरकार की नीति की घोषणा की तथा यथाशीघ्र संविधान निर्माण निकाय का गठन करने का निश्चय किया। संविधान निर्माण में देर न हो जाए इसलिए प्रान्तीय विधान सभाओं का उपयोग निर्वाचक निकायों के रूप में किया जाना तय किया। मोटे रूप में प्रत्येक 10 लाख जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि चुना जाना तय किया।

ब्रिटिश भारत के प्रान्तों को आवंटित 296 स्थानों के लिए जुलाई–अगस्त 1946 तक इस प्रकार पूरे किए गए। काँग्रेस 208, मुस्लिम लीग 73, युनियनिस्ट 1, युनियनिस्ट मुस्लिम 1, कृषक प्रजा 1, अनुसूचित जाति परिसंघ, सिख (गैर कांग्रेसी) 1 कम्युनिस्ट 1, स्वतंत्र 8. 15 अगस्त 1947 तक अधिकांश रियासतों के प्रतिनिधि भी विधान सभा में आ गए।

इसी मध्य 24 अगस्त 1946 को अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार की घोषणा हो गई। इसमें पं. जवाहरलाल नेहरू, सरदार बल्लभ भाई पटेल, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, आसफ अली, शरतचन्द्र बोस, डॉ. जान मथाई, सर शफात अहमद खां, जगजीवन राम, सरदार बलदेव सिंह, सैयद अली जहीर, सी राजगोपालाचार्य और डॉ. सी. एच. भाभा शामिल थे। कानूनी तौर पर ये सब वाइसराय की कार्यकारिणी के सदस्य थे और वाइसराय परिषद का अध्यक्ष था। जवाहरलाल नेहरू परिषद के उपाध्यक्ष बनाए गए थे। 2 सितम्बर 1946 को पं. नेहरू के साथ ग्यारह सदस्यों ने पद की शपथ ग्रहण की। 26 अक्टूबर 1946 को सरकार का पुनर्गठन हुआ। इसमें मुस्लिम लीग के 5 सदस्य सम्मिलित हुए तथा तीन सदस्यों शरतचन्द्र बोस, सैयद अली जहीर और सर शफात अहमद को हटा दिया गया। संविधान सभा का विधिवत् उद्घाटन सोमवार 9 दिसम्बर 1946 को प्रातः 11 बजे हुआ। 13 दिसम्बर 1946 को पं. जवाहरलाल नेहरू ने उद्देश्य प्रस्ताव पेश किया। सुन्दर शब्दों में तैयार किए गए उद्देश्य प्रस्ताव के प्रारूप में भारत के भावी प्रभुता सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य की रूप–रेखा दी गई थी। इस प्रस्ताव में एक संघीय राज्य व्यवस्था की परिकल्पना की गई थी, जिसमें अवशिष्ट शक्तियाँ स्वायत्त इकाइयों के पास होती और प्रभुता जनता के हाथों में। सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक, न्याय, परिस्थिति की, अवसर की और कानून के समक्ष समानता, संगम और कार्य की स्वतंत्रता की गारन्टी दी गई तथा साथ ही अल्पसंख्यकों पिछड़े तथा जनजातिय क्षेत्रों तथा दलितों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए पर्याप्त रक्षोपाय रखे गए।

संविधान सभा ने संविधान रचना की समस्या के विभिन्न पहलुओं से निपटने के लिए अनेक समितियाँ नियुक्त की। इनमें संघीय संविधान समिति, संघीय शक्ति समिति, मूल अधिकार और अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित समितियाँ शामिल थीं। इनमें से कुछ ने परिश्रम के साथ सुनियोजित ढंग से कार्य किया और अनमोल रिपोर्ट पेश की।

भारत के संविधान का पहला प्रारूप संविधान सभा कार्यालय की मंत्रणा–शाखा ने अक्टूबर 1947 में तैयार किया। इसमें लगभग 60 देशों के संविधानों से मुख्य अंश उद्धृत किए गए थे।

29 अगस्त 1947 को डॉ. भीमराव अम्बेडकर के सभापतित्व में प्रारूपण समिति की नियुक्ति हुई। 21 फरवरी 1948 को संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को प्रारूपण समिति द्वारा तैयार किया गये संविधान का प्रारूप पेश किया गया। संविधान प्रारूप पर बड़ी संख्या में टिप्पणियाँ और संशोधन प्राप्त हुए। प्रारूप समिति ने 26 अक्टूबर 1946 को संविधान के प्रारूप को दोबारा छपवा कर संविधान सभा के अध्यक्ष को पेश किया।

4 नवम्बर 1948 को संविधान सभा में संविधान के प्रारूप को विचार के लिए पेश किया गया। इस पर 15 नवम्बर 1948 से 17 नवम्बर 1948 को खण्डवार विचार किया गया। प्रस्तावना सबके बाद स्वीकार की गई। संविधान 16 नवम्बर को पूरा हुआ। उससे अगले दिन संविधान सभा ने संविधान तीसरा वाचन शुरू किया। प्रस्ताव 26 नवम्बर 1949 को स्वीकृत हुआ। संविधान पर 24 जनवरी 1950 को सभा के सदस्यों के हस्ताक्षर हुए और 26 जनवरी 1950 को यह देश की राज्य व्यवस्था पर लागू हो गया।

क्रमशः

73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी,
कोटा (राज.)

☞ पृष्ठ 08 का शेष

वेद मार्ग ही ...

नष्ट होने से पुनः जन्म नहीं होता। इससे दुःखों का अभाव हो जाता है। दुःखों के अभाव होने से जीवात्मा परमानन्द यानी मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

स्वामी दयानन्द ने दुनिया के लोगों से यह कहा था कि जो मनुष्य अपने जीवन को सुख शांति से व्यतीत करना चाहते हैं और दुःखों से छूटकर परमानन्द रूपी सागर में निमग्न रहना चाहते हैं तो ऐसे लोग हमारे देश के ऋषि–मुनियों, महर्षियों एवं विद्वानों ने जो मार्ग अपनाये हैं उन मार्गों पर चलें। तभी मनुष्य जाति का कल्याण संभव है। हमारे राष्ट्र के ऋषि–मुनियों, महर्षियों एवं विद्वानों ने वेदों के मार्गों का ही अनुसरण किया था। अतः हमें भी वेदों के मार्गों का ही अनुसरण करना चाहिए। तभी हम मोक्ष की कल्पना कर सकते है और स्वामी दयानन्द के सपनों को साकार कर सकते हैं। क्योंकि वेदों के मार्गों पर चलने से ही मानव जाति का कल्याण, उत्थान एवं सुधार संभव है। इसलिए मानव जाति के कल्याणार्थ केवल वेदमार्ग ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग है। अन्य कोई मार्ग नहीं।

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ फरीदाबाद, हरियाणा
मो. 8700640736

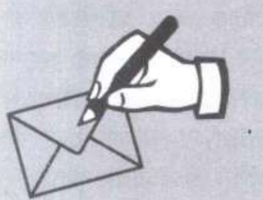

पत्र/कविता

वेद के प्रकाश की ज्योति जले

वेद के सत्य ज्ञान में मुंह मोड़कर।
ईश्वर–भक्ति से नाता तोड़कर।
धर्म–मर्यादा का मार्ग छोड़कर।
आस्था को रख दिया झंजोड़कर।
अपने हाथों अपना ही सिर फोड़कर।
कोसते रहते हैं अपनी जान को।
सद्‌गुणों के कर्म से होकर परे।
जी भर के अपनी मनमानी करे।
अपने सारे दोष औरों पर धरे।
इसको क्या कोई जिए कोई मरे।
दम भरे तो खोटी बातों का भरे।
खो दिया अपनी खरी पहचान को।।
यज्ञ हवन से उकताने लगे।
उलझनों में फंस के रह जाने लगे।
बेसुरी सी रागिनी गाने लगे।
अंधे विश्वासों में दु:ख पाने लगे।
ठोकरों पर ठोकरें खाने लगे।
कुछ समझते ही नहीं भगवान को।।
फिर पहला सा दिलों में प्यार हो।
दूर हो सब दु:ख, सुखी संसार हो।
सच्चे वैदिक धर्म का प्रचार हो।
प्यारा सुन्दर स्वस्तिपथ तैयार हो।
अपने जीवन का सरल व्यवहार हो।
होश आ जाए दु:खी इन्सान को।।
फिर जमाने में हवा ऐसी चले।
भावना शुभ कर्म की फूले–फले।
वेद के प्रकाश की ज्योति जले।
प्यार के सांचे में फिर जीवन ढले।
संस्कृति जीवित रहे संकट टले।
कोई झुठलाए न वैदिक ज्ञान को।।

वेद प्रकाश शर्मा धारीवाल
103 अकुर–बी, झलर
वलसाड 396001 गुजरात

जातिवाद का खात्मा कैसे हो?

अंतर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ढाई लाख रु. का अनुदान देती है याने यह पैसा उनको मिलता है, जो अनुसूचित जाति या वर्ग के वर या वधू से शादी करते हैं लेकिन खुद होते हैं, सामान्य वर्ग के! सामान्य का अर्थ यहाँ ऊंची जाति ही है। याने ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य! इनमें तथाकथित पिछड़े भी शामिल हैं। इस अनुदान–राशि के बावजूद देश में हर साल 500 शादियाँ भी नहीं होतीं। सवा अरब लोगों के देश की इस हालत को ऊंट के मुंह में जीरा नहीं तो क्या कहेंगे?

इसका एक कारण सरकार ने अभी–अभी खोज निकाला है। वह यह है कि यह अनुदान राशि उन्हीं जोड़ों को मिलती है, जो अपना रजिस्ट्रेशन 'हिंदू मेरिज एक्ट' के तहत करवाते हैं। आर्यसमाज आदि में हुई शादियों को यह मान्यता नहीं है। अब उन्हें मान्य कर लिया जाएगा। यह अच्छा है, सराहनीय है लेकिन इससे भी कौनसा किला फतेह होनेवाला है? क्या देश के आर्यसमाजों में हर साल हजारों–लाखों शादियां होती हैं?

देश की जातीय–व्यवस्था में परिवर्तन तभी होगा जबकि प्रति वर्ष लाखों शादियां अन्तर्जातीय हों लेकिन इस मामले में हमारे नेता लोग ठन–ठन गोपाल हैं, शून्य हैं, बिल्कुल अकर्मण्य हैं। जो उन्हें करना चाहिए, वह वे बिल्कुल नहीं करते।

सबसे पहले नौकरियों से जातीय आरक्षण खत्म करना चाहिए। दूसरा– जातीय आधार पर चुनावी उम्मीदवार तय नहीं करना चाहिए। तीसरा–जातीय नाम या उपनाम रखनेवाले को चुनावी टिकिट नहीं देना चाहिए। चौथा–लोगों से आग्रह करना चाहिए कि वे जातीय उपनाम रखना बंद करें। पांचवां–किसी भी सरकारी कर्मचारी द्वारा जाति या उप–जातिसूचक नाम रखने पर प्रतिबंध होना चाहिए। छठा–संगठनों, धर्मशालाओं, अस्पतालों और मोहल्लों के जातिसूचक नाम बंद होने चाहिए। सातवां– सबसे बड़ा काम यह है कि मानसिक श्रम और शारीरिक श्रम का भेद मिटना चाहिए। कुर्सीतोड़ और कमरतोड़ कामों के मुआवजे में अधिक से अधिक 1 और 10 का अनुपात होना चाहिए।

सदियों से चली आ रही इस रुढ़ि ने ही देश में ऊंची और नीची जातियों का भेदभाव खड़ा किया है। क्या सिर्फ ढाई लाख रु के लालच में ही अंतर्जातीय विवाह हो जाएँगे? हां, इनसे उनकी मदद जरुर हो जाएगी।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक
www.drvaidik.in

****

आँवला अमृत फल

आयुर्वेदिक मत– अम्लप्रधान, लवणरहित, पाँच रस, लघु रुक्ष, शीतगुण, शीतवीर्य और मधुर विपाक है। यह त्रिदोषहर विशेषकर पित्तशामक है। मैध्य, बल्य, रोचक, दीपन, यकृदुत्तेजक, हृद्य, कफघ्न, वृष्य, मूत्रल, प्रमेहघ्न, कुष्ठघ्न और रसायन है। दाह पैत्तिक, सिरशूल तथा मूत्रावरोध में इसका लेप करते हैं। नेत्ररोग में इसका स्वरस डालते हैं। आयुर्वेद की प्रसिद्ध औषधि च्यवनप्राश इससे बनता है। आँवला शीतवीर्य है, अमृततुल्य गुण है। किसी भी ऋतु, प्रकृति, देश, काल और वय के लिए आँवला पथ्य है।

वैज्ञानिक मत– आँवला में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में है। नारंगी–संतरा और मौसम्बी की तुलना में आँवले में विटामिन सी बीस गुना अधिक है। आँवला लौह तत्व से भरपूर है इसीलिए इससे शरीर में नया रक्त उत्पन्न होता है।

आँवले में भरपूर मात्रा में एंटीऑक्सीडेंट, पोटेशियम, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, प्रोटीन, आयरन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह मैटाबोलिक क्रियाशीलता को बढ़ाता है। इससे जोड़ों के दर्द आर्थराइटिस आस्टोमोरोसिस में आराम मिलता है। गूदा 90.97%, तरी 70.5%, जूस 23.8%, खट्टा 3.28 प्रतिशत टाक्सिन को हमारे शरीर से बाहर निकालने में मदद करता है।

आधुनिक मत– इसके फल में गैलिक एसिड, टैनिक एसिड, शर्करा, अम्ल, व्यूमिन, कैल्शियम और विटामिन सी होता है।

डॉ. शौरी के अनुसार ताज़ा फल चिकना, पेशाब साफ करने वाला और हल्का दस्तावर होता है, सूखा फल शीतल होता है।

उपयोग–

किडनी में होने वाले संक्रमण और पथरी से छुटकारा पाने में, तनाव में आँवला लाभकारी है, इससे नींद अच्छी आती है। रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है, टाक्सिन शरीर से बाहर निकालने में मदद करता है। जोड़ों के दर्द आस्टोयोरोसिस आर्थराइटिस में आराम मिलता है। आँवला भोजन को पचाने में मदद करता है। आँवले के रस में हल्दी का चूर्ण मिलाकर शहद के साथ चाटने से सब प्रकार के प्रमेह मिटते हैं। आँवला और असगन्ध समान भाग लेकर दूध के साथ पीने से बल कान्ति में वृद्धि होती है। आँवले के सेवन को वय: स्थायन कहते हैं। इसके नियमित सेवन से उम्र कम मालूम होती है। आँवले का रस एक तोला, काली द्राक्ष पानी में मसली हुई 1 तोला और शहद आधा तोला एकत्र कर पीने से अम्ल पित्त मिटता है। आँवले और काले तिल समभाग लेकर बारीक चूर्णकर शहद के साथ चाटने से वृद्धत्व दूर होता है और शक्ति आती है।

हरिश्चन्द्र आर्य
अमरोहा उ.प्र.
05922263422

****

डी.ए.वी. एच. सी. एल. विद्यालय में बारहवी के छात्रों को विदाई

मलाजखंड ताम्र परियोजना द्वारा संचालित केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से संबध्द डी.ए.वी. एच. सी. एल. पब्लिक स्कूल मलाजखंड में कक्षा बारहवीं के छात्रों को विदाई दी गयी। कार्यक्रम का शुभारम्भ वैदिक परंपरा के अनुसार वैदिक मंत्रोच्चारण एवं हवन के साथ हुआ। इस अवसर पर कक्षा बारहवीं के छात्रों ने इस दिन को विशेष बताते हुए अपनी खट्टी – मीठी यादें व अनुभव साझा किये।

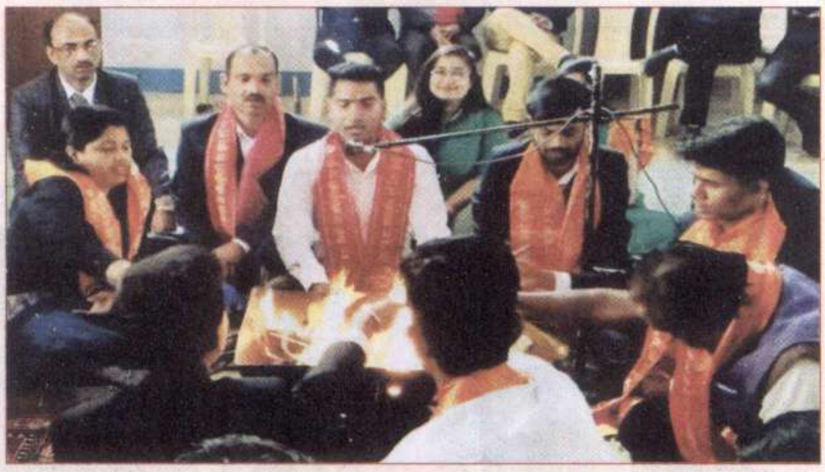

इस अवसर पर विद्यालय प्रबंधन समिति के अध्यक्ष श्री विनय कुमार सिंह, मध्य प्रदेश डी.ए.वी. स्कूल के सहायक क्षेत्रीय अधिकारी श्री एस. के. सिन्हा एवं विद्यालय के प्राचार्य श्री आर. पी. मिश्रा ने छात्र – छात्राओं को शुभकामनाएँ देते हुए उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की। कार्यक्रम में उपस्थित सभी शिक्षक – शिक्षिकाओं ने छात्रों को शुभाशीष देकर श्रेष्ठतम अंकों के साथ उत्तीर्ण होने की मंगल कामना की। शांति पाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

आचार्य चैतन्यमुनि 'हिन्दी सुधा-निधि' की मानद उपाधि से सम्मानित

आचार्य भगवानदेव 'चैतन्य' (महात्मा चैतन्यमनि) को उनके द्वारा उत्कृष्ट हिन्दी साहित्य की समृद्धि, राजभाषा हिन्दी की सेवा, प्रखर पत्रकारिता, मानवतावादी प्रबुद्ध वैदिक प्रवक्ता, निष्काम समाजसेवा एवं उत्कृष्ट प्रशासनिकता के लिए **'हिन्दी सुधा–निधि'** की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर उन्हें उत्तरीय वस्त्र, शॉल, मोतियों की माला, मारवाड़ी सम्मान–सूचक मुकट, अभिनन्दन पत्र, श्रीफल तथा नगद राशि से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर इनके द्वारा किए गए उल्लेखनीय कार्यों का उल्लेख करते हुए अभिनन्दन–पत्र का भी वाचन किया गया।

आचार्य जी की रचनाओं की एक लम्बी सूची है। अनेक प्रबुद्ध समीक्षकों ने इनकी रचनाओं पर समीक्षा की है। 'बदरंग हवा' की समीक्षा करते हुए समीक्षक ने लिखा है–' ....प्रेमचन्द की तरह ही चैतन्य जी के कथा सुनाने के ढंग में एक अपनापन है और उनकी तरह ही वह कहानी की पूरी भूमिका बान्धने के बाद ही पात्रों और घटनाक्रम को सामने लाते हैं...'इनके काव्य के सम्बन्ध में एक और समीक्षक ने लिखा है–'चैतन्य के काव्य में अज्ञेय की चिंतनशीलता, त्रिलोचन का काव्य सौन्दर्य और नागार्जुन का फक्कड़पन एक साथ देखने को मिलता है...'

हंसराज मॉडल स्कूल पंजाबी बाग बना फिट इंडिया कैंपेन का हिस्सा

हंसराज मॉडल स्कूल 'फिट इंडिया कैंपेन' का हिस्सा बन गया, जिसकी शुरुआत भारत के माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने की। 'फिट इंडिया' के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए स्कूल ने 'फिट इंडिया सप्ताह' मनाया, जिसमें पूरे स्कूल के छात्रों ने फिटनेस सम्बन्धी अनेक परम्परागत खेलों से जुड़ी आकर्षक गतिविधियों में भाग लिया। योग सत्र के साथ 'फिट इंडिया सप्ताह' की शुरुआत हुई।

स्कूल की प्रधानाचार्या श्रीमती हीमाल हंडू भट ने छात्रों को सम्बोधित किया और 'फिट' होने की अवधारणा से अवगत कराया– मानसिक और शारीरिक रूप से स्वास्थ्य के प्रति जागरूक किया। पौष्टिक भोजन और निद्रा से संबंधित बुनियादी बातों से भी परिचित किया गया। छात्रों ने इस बात का भी ज्ञान प्राप्त किया कि तनाव और क्रोध का प्रबंधन कैसे किया जाए, जिससे वे अपने ऊपर आए अध्ययन सम्बन्धी कार्यभार पर धैर्य बनाए रख सकते हैं। सत्र का समापन भारत को फिट राष्ट्र बनाने के लिए प्राप्त ज्ञान को घर वापस ले जाने के वादे के साथ हुआ।

इसके अलावा 'ऑन–द–स्पॉट पोस्टर निर्माण प्रतियोगिता', 'प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता' का आयोजन किया गया।

स्कूली सीमाओं से परे 'फिट इंडिया' के संदेश की वकालत करने के लिए, छात्रों ने स्कूल के बाहर कॉलोनी में एक 'क्रॉस कंट्री रेस' में भी भाग लिया।

'फिट इंडिया सप्ताह' के अंतर्गत छात्रों ने अपने पारस्परिक कौशल को मजबूत करने के लिए लक्ष्य निर्धारित करने, दृढ़ संकल्प बनाने, टीम–भावना विकसित करने और आपसी सहयोग को बढ़ावा देने का समर्थन किया। छात्रों को उनकी शारीरिक क्षमता, साथ ही साथ उनकी तार्किक सोच को बढ़ाने की भी सुविधा मिली, इसलिए, उनके सामाजिक और भावनात्मक विकास को बढ़ावा मिला।

डी.ए.वी. सूरजपुर अधिकतम रक्तदान के लिए सम्मानित हुआ

पंजाब विश्वविद्यालय में रोटरी और ब्लड बैंक सोसाइटी रिर्सोस सेन्टर द्वारा दिनाँक 11 फरवरी को 'सम्मान समारोह' का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में उन संस्थानों के प्रमुख तथा संचालकों को सम्मानित किया गया जिनका रक्त दान शिविरों में अधिकतम यूनिट का सहयोग रहा। डी.ए.वी. सीनियर पब्लिक स्कूल, सूरजपूर की प्राचार्या डॉ. ममता गोयल को जलियाँवाला बाग के शताब्दी वर्ष पर 07. 09.2019 को आयोजित किए गए रक्तदान शिविर में अधिकतम 102 यूनिट एकत्रित करने हेतु सम्मानित किया गया।

विद्यालय की ओर से सम्मान प्राप्त करने के बाद प्राचार्या डॉ. ममता गोयल ने कहा कि मानव कल्याण हेतु रक्तदान महादान है। रक्तदान से हम लोगों को नई जिन्दगी दे सकते हैं। उन्होंने कहा इस सम्मान को श्रेय स्कूल स्टाफ तथा विशेष रूप से विद्यार्थियों के अभिभावकों को जाता है जिनके पूर्ण सहयोग से विद्यालय में प्रतिवर्ष रक्तदान शिविर आयोजित किया जाता है।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 26/27-02-2020

डी.ए.वी. सैक्टर-15ए, चण्डीगढ़ की झाँकी आई प्रथम

केन्द्रीय आर्य सभा चण्डीगढ़, पंचकूला एवं मोहाली के संयुक्त तत्वावधान में महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में डी.ए.वी. मॉडल स्कूल सैक्टर–15ए, चण्डीगढ़ द्वारा प्रस्तुत झाँकी को प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के 196 वाँ जन्मोत्सव पर चण्डीगढ़ में भव्य शोभा यात्रा निकाली गई जिसमें ट्राई सिटी के विभिन्न शिक्षण संस्थान व आर्य समाज अपनी अपनी संस्थानों से एक–एक झाँकी व विद्यार्थियों के साथ शोभा यात्रा में सम्मिलित हुए।

डी.ए.वी. सैक्टर–15 को झांकी का विषय था

सत्यार्थ प्रकाश एक जीवन दर्शन

प्रस्तुत झाँकी का मुख्य उद्देश्य था–महर्षि दयानन्द सरस्वती की अनुपम कृति–अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के संदेश का जन–जन तक पहुँचाना तथा जनमानस को इस अद्‌भुत ग्रन्थ के प्रति जागृत करना था।

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, दुर्गापुर में महर्षि दयानन्द सरस्वती जन्मोत्सव पर भव्य आयोजन

आर्य युवा समाज डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, दुर्गापुर के तत्त्वावधान में बड़ी धूमधाम से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जन्मदिवस एवं ऋषि बोध उत्सव का आयोजन किया गया। इस विशेष अवसर पर सर्वप्रथम आर्य युवा समाज के सभी सदस्यों ने मिलकर बृहत् रूप से विश्वशांति महायज्ञ किया। इस विशेष यज्ञ की मुख्य यजमान स्वयं (आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पश्चिम बंगाल) की प्रधान श्रीमती पापिया मुखर्जी रहीं। यज्ञोपरांत विद्यालय की संगीत विभाग की अध्यापिकाओं द्वारा 'वेदों का डंका आलम में ....' इस भजन के द्वारा एवं ईश्वर भक्ति के अन्य भजनों के माध्यम से उपस्थित सभी सदस्यों को मंत्रमुग्ध कर दिया।

आर्य युवा समाज के मंत्री श्री नीरज कुमार झा महोदय ने ऋषि दयानन्द के मतानुसार ईश्वर के स्वरूप पर प्रकाश डाला। विद्यालय के संस्कृत शिक्षक श्री कृष्णेंदु महोदय ने भी वेदवाणी सरल संस्कृत भाषा में ऋषि दयानन्द जी के जीवन के विषय में अपने विचार प्रस्तुत किए।

तत्पश्चात् उपसभा, प्रधान श्रीमती पापिया मुखर्जी ने महर्षि दयानन्द जी के अमरग्रंथ सत्यार्थप्रकाश के अनुसार बताया कि संसार की सारी सम्पत्ति और वस्तुएँ ईश्वर की ही हैं इसलिए हम ईश्वर को कभी कोई वस्तु देकर प्रसन्न नहीं कर सकते। ईश्वर को खुश करने का केवल मात्र एक ही माध्यम है और वो है **'परोपकारर्थमिदं शरीरम्'।**

प्राचार्या महोदया ने बताया कि किस तरह हम अंधविश्वास के जाल में फंसकर अपना समय और पैसा नष्ट कर देते हैं। ऐसा न करके हमें महर्षि दयानन्द जी के कथनानुसार वेदों की आज्ञा मानकर अपने जीवन को सार्थक बनाना चाहिए।

अंत में महोदया ने सबको साधुवाद देकर और कार्यक्रम को सफल बताकर सभी सदस्यों का उत्साहवर्धन भी किया।

अंत में शांतिपाठ और जयघोष के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

ग्यारह कुंडीय यज्ञ कर मनाई महर्षि स्वामी दयानंद जयंती

डी.ए.वी. पुलिस पब्लिक स्कूल कैथल के प्रांगण में महर्षि दयानंद जयंती अत्यंत हर्षोल्लास से मनाई गई। इस अवसर पर विद्यालय में ग्यारह कुंडीय यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें प्रधान यजमान प्रधानाचार्या श्रीमती अंजु गंभीर रहीं। यजमान के रूप में शिक्षक एवं शिक्षिकावृंद की उपस्थिति रही। छात्र–छात्राओं ने अत्यंत उत्साहपूर्वक यज्ञ में भाग लिया। इस अवसर पर विद्यालय के बच्चों ने स्वामी दयानंद जी के जीवन के प्रेरणादायक प्रसंगों का जीवंत मंचन किया। सभी विद्यार्थियों ने वेद की पावन ऋचाओं का पाठ कर वातावरण को चारों ओर से वेदमय कर दिया।

विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती अंजु गंभीर ने विद्यार्थियों को विशेष उद्‌बोधन में कहा कि अमर बलिदानी एवं महान समाज सुधारक महर्षि दयानंद जी का समाज जागरण एवं समाज में फैली कुरीतियों को समाप्त कर वैदिक धर्म का प्रचार करने में अतुलनीय योगदान रहा है। समाज सदा ही उनका ऋणी रहेगा। उन्होंने समाज सेवा व देश को स्वतंत्र करवाने हेतु अपना जीवन समाज सेवा की वेदी पर समर्पित कर दिया। हमें भी उनके दिखाए मार्ग पर चलना चाहिए। इसी में मानवता व समाज का हित है। विद्यार्थियों ने समाज कल्याण हेतु सदैव तत्पर रहने का प्रण भी लिया और स्वामी जी के नवराष्ट्र निर्माण के सपने को साकार करने हेतु अपना सर्वस्व समर्पित करने का संकल्प भी लिया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**